दुनिया के मजदूरो एक हो!

बिगुल

मासिक बुलेटिन • अंक 6
अक्टूबर 1996 • दो रुपये • आठ पृष्ठ

उत्तर प्रदेश विधान सभा चुनाव '९६

अवसरवादी गठबन्धन और जाति, धर्म एवं गुण्डागर्दी का खुला खेल
पूंजीवादी राजनीति का सबसे गंदा चेहरा

अखबार के इस अंक के पाठकों के हाथों में पहुंचने तक उत्तर प्रदेश विधान सभा चुनाव सम्पन्न हो चुके रहेंगे और फैसलों की प्रतीक्षा रहेगी। पर इंतजार की बेकरारी, पूंजीवादी चुनावी पार्टियों के नेताओं और उम्मीदवारों के भीतर ही होगी। मंहगाई, बेरोजगारी, छंटनी-तालाबंदी की मार लगातार झेल रही आम आबादी की चुनावी नतीजों में एक सहज-सी उत्सुकता भले ही हो, पर किसी भी दल या गठबंधन से ज़िन्दगी की बढ़ती दुश्वारियां कम होने की कोई भी उम्मीद नहीं है और इस नाते चुनावी गहमागहमी और नतीजों में उसकी कोई विशेष दिलचस्पी नहीं है। देश के सबसे अधिक आबादी वाले राज्य का यह सबसे फीका चुनाव है जो पूंजीवादी जनतंत्र के प्रति जनता के मोहभंग का सूचक है। पर सवाल यह है कि जनता आखिर करे क्या? उसके सामने विकल्प क्या हैं?

आज के राजनीतिक हालात और आने वाले विस्फोटक समय के बारे में सोचना होगा और अपने कार्यभार तय करने होंगे!

इस विकल्प की चर्चा से पहले मौजूदा हालात पर थोड़ी चर्चा ज़रूरी है।

I. बुनियादी आर्थिक-सामाजिक नीतियों के प्रश्न पर सभी पूंजीवादी और नकली वामपंथी चुनावी पार्टियां एक है!

निजीकरण और उदारीकरण की नीतियों पर अमल के पांच वर्षों बाद न केवल मंहगाई, बेरोजगारी, धनी-गरीब के बीच की खाई, शिक्षा और दवाओं की कीमतों की अभूतपूर्व तेज रफ्तार से होने वाली बढ़ोत्तरी ने आम मेहनतकश आबादी और मध्यम तबकों की ज़िन्दगी को एक अंधेरे रसातल में धकेल दिया है; बल्कि साथ ही भारत में उत्पादन, राजकाज और समाज का समूचा पूंजीवादी तानाबाना इस तरह के असाध्य ढांचागत संकटों और गहरे अन्तरविरोधों में उलझ गया है, जैसा पिछले पचास वर्षों के दौरान कभी नहीं देखा गया था। सभी शासक वर्ग, उनके विभिन्न धड़े और सभी पूंजीवादी एवं नकली वामपंथी चुनावी पार्टियां व्यवस्था के ऐतिहासिक संकट के इस नये दौर में, भयंकर कलह-विग्रह और कुत्ताघसीटी में उलझी हुई हैं। किसी भी तरह की बेशर्म अवसरवादी जोड़तोड़ से सत्ता पर काबिज होना ही (भले ही कुछ महीनों के लिए ही सही) सभी दलों का एकमात्र उद्देश्य है और इसके लिये नाटकीय ढंग से रातोंरात नये गठबंधन और नये दल बन रहे हैं और बिखर रहे हैं। स्थायित्व या निश्चितता कहीं नहीं है। एकदम तरलता और अनिश्चय की स्थिति है। एकदम वित्तीय बाज़ारों की तरह।

चूंकि बुनियादी आर्थिक और सामाजिक नीतियों के मामले में सभी राजनीतिक दलों के बीच कोई फर्क नहीं है (फर्क सिर्फ जोर और प्राथमिकताओं का ही है) और चूंकि लोकरंजक नारों और लुभावने वायदों की गुजाइशें लगभग समाप्त हो चुकी हैं, इसलिए जाति और धर्म के आधार पर (और क्षेत्रीयता के भी आधार पर) जनता को बांटने की राजनीति का जो खेल पहले अघोषित रूप से खेला जा रहा

(पेज 4 पर जारी)

धनबाद में धरती के नीचे धधक रही आग से लाखों लोगों का जीवन खतरे में

धनबाद की भूमिगत कोयला खदानों में पिछले कई वर्षों से लगी आग से लोदना, तिसरा और झरिया समेत अनेक मज़दूर बस्तियों और गावों में रह रहे लोगों की ज़िन्दगी को ख़तरा बना हुआ है। यह समस्या बरसों से मौजूद है, पर खानों के अधिकारी, स्थानीय प्रशासन और सरकार कान में तेल डाले पड़ी है।

धनबाद के ट्रेड यूनियनों से तो कुछ उम्मीद ही व्यर्थ है। उनमें से अधिकांश पर तो माफिया सरदारों और गुण्डों का ही एकाधिकार है जिनका काम सिर्फ मज़दूरों को डरा-धमकाकर अवैध वसूली करना, हर तरह के काले धंधे में प्रशासन और नेताओं के साथ साझेदारी करना और प्रतिद्वंद्वी यूनियनों के साथ गैंगवार में

यह आग प्राकृतिक आपदा नहीं मुनाफाखोरों की अंधी हवस का नतीजा है

उलझे रहना मात्र है। ए.के.राय की ट्रेड यूनियन भी आनुष्ठानिक अर्थवादी संघर्षों और उनकी विचित्र मार्क्सवादी पार्टी, 'मार्किस्ट कोआर्डिनेशन कमेटी' की विचित्र चुनावी राजनीति की सीमाओं में कैद होने के कारण मज़दूरों के किसी भी हित की लड़ाई प्रभावी ढंग से नहीं लड़ पा रही है।

झारखण्डी दल जो इस पूरे इलाके की जनता की नुमाइन्दगी का दावा करते हैं, वे भी इतनी गंभीर समस्या के प्रति गंभीर नहीं है। उन्हें करोड़ो रुपये लेकर सांसदों के वोट बेंचने और निकृष्ट कोटि की बुर्जुआ राजनीति के खेल से ही फुर्सत नहीं है।

इधर स्थिति यह है कि कुख्यात चासनाला खान दुर्घटना और गजलीटांड खान दुर्घटना में पानी भर जाने से सैकड़ों मज़दूरों की जानें जिस तरह गई थी, वैसी ही दुर्घटना की आशंका कई खानों में बनी हुई हैं। और फिर ऐसी दुर्घटनाओं से कई गुना भयंकर दुर्घटना की आशंका खान क्षेत्रों के आसपास की लाखों की मेहनतकश आबादी के लिए आग ने पैदा कर दी है। (पेज 3 पर जारी)

निजीकरण से मजदूरी की दर और सुविधाओं में भारी कटौती पेज 6

मजदूर की जिन्दगी इतनी सस्ती क्यों? पेज 3

स्कूटर्स इंडिया के मजदूरों के आंदोलन की आंशिक जीत

आगे के लिए कुछ जरूरी सबक, सोचने के लिए कुछ जरूरी सवालात
अपनी लड़ाई को बड़ी लड़ाई की एक कड़ी के रूप में देखो!

यह उपलब्धि अतिसीमित है लेकिन यह भी मजदूरों के एकजुट संघर्ष के बिना नहीं मिलती

पिछले दिनों लखनऊ में स्कूटर्स इंडिया कारखाने के मजदूरों ने एक लम्बी लड़ाई के बाद कुछ महत्वपूर्ण उपलब्धियां हासिल कीं। कई महीने से चल रहे आंदोलन के प्रति मैनेज़मेंट और सरकार के उपेक्षापूर्ण रवैये से तंग आकर मजदूरों ने पिछले अगस्त माह के अंत में स्कूटर्स इंडिया मजदूर एक्शन संगठन के तत्वावधान में क्रमिक अनशन शुरू किया और फिर उनके दो नेताओं ने आमरण अनशन और रोज फैक्ट्री गेट पर मजदूरों की बड़ी मीटिंगों का सिलसिला शुरू कर दिया। मजदूरों के व्यापक समर्थन के दबाव के कारण तेरह दिन बाद मैनेज़मेंट ने मजदूर प्रतिनिधियों से वार्ता की और कुछ मांगें मान लीं जिसमें सबसे महत्वपूर्ण है एक जनवरी 1992 से वेतन पुनरीक्षण के लिए वार्ता शुरू करने पर सहमति। जब तक वेतन पुनरीक्षण लागू नहीं होता तबतक कर्मियों को प्रति माह 600 रुपये अतिरिक्त मिलते रहेंगे।

(पेज 8 पर जारी)

आपस की बात

हम ऐसे गुलाम है जो गुलामों पर डण्डे बरसाते है

'बिगुल' अखबार मैंने रेलगाड़ी में यात्रा करते हुए प्रचार-दस्ते से खरीदा। यह अखबार अगर लगातार निकलता रहा तो मज़दूर वर्ग को एक नये इंकलाब के लिए तैयार करने में बहुत बड़ी भूमिका निभायेगा।

मैं उ.प्र. पुलिस का एक सिपाही हूं। एक ऐसी नौकरी करता हूं जिसे आम लोग बड़ी नफरत की निगाह से देखते हैं। मानता हूं कि पुलिस महकमें में बड़ा भ्रष्टाचार है। पर हम कुछ नहीं कर सकते। हम भी ज्यादातर किसानों और मज़दूरों के ही लड़के है। पर अपना पेट पालने के लिए उन्ही पर डंडे भांजते हैं। यही नहीं, हममें से ईमानदारों को भी कुछ ऊपरी कमाई पेट पालने के लिए करनी पड़ती है। खालिस तनख्वाह से बाल-बच्चों का पेट भर पाना भी संभव नहीं। मैं बी.ए. पास हूं पर साहबों के घर दाई-नौकर की तरह बेगारी भी करनी पड़ती है और गालिंया भी सुननी पड़ती है। उनके लिए सौदे भी पटाने पड़ते है और ट्रक-टैक्सी वालों से वसूली भी करनी पड़ती है। बड़ी घुटन होती है। पर कुछ नहीं कर सकते। हमारी यूनियन भी नहीं है कोई, जो हमारी मांग उठाये। पुलिस लाइन में हमारी ज़िन्दगी थाने में हिरासत में रखे जाने वाले लोगों जैसी ही बदतर है। हमलोग ऐस गुलाम हैं जो गुलामों पर डण्डे बरसाते हैं।

अभी पिछली जुलाई में अखबार में एक खबर पढ़ी कि मुजफ्फरनगर के मंगलौर थाना के ग्राम चंदनपुर में एक होमगार्ड जवान सतबीर ने अपने परिवार के छः जनों को गंगानहर में फेंककर स्वयं भी कूद कर आत्महत्या कर ली। वह गरीबी से तंग आ चुका था। उसके पास अपने बच्चे के इलाज के लिए पैसे नही थे। विभाग से मिलने वाला भत्ता भी उसे तमाम कोशिशों के बावजूद समय से नहीं मिला। तब से उसने यह भयंकर कदम उठाया। सतबीर के हालात में पुलिस के तमाम जवान रह रहे हैं। मैं हमेशा सोचता हूं आखिर रास्ता क्या है? आज सभी चुप हैं पर कभी न कभी तो आग भड़केगी ही। इतने लूटपाट, घोटाले, भ्रष्टाचार के बावजूद और इतनी मंहगाई, गरीबी, बेरोजगारी और धनी-गरीब की बढ़ती खाई के बाद भी सबकुछ ऐसे ही चलता रहेगा, यह तो हो ही नहीं सकता।

'बिगुल' से उम्मीद बंधती है कि यह गरीबों को मुक्ति का रास्ता दिखायेगा।

- उ.प्र. पुलिस का एक सिपाही

बिगुल को ऐसी फफूंदों से बचायें...

'बिगुल' के सद्यः प्राप्त अंक में मुंबई के 'मार्क्सवादी विचारक' (!) आत्माराम का पत्र पढ़ा। आपका जवाब भी। मुझे दुःख है कि इतना पढ़ लेने के बावजूद साथी आत्माराम की आंखों पर पड़ा परदा नहीं हट पाया होगा।

यहां बात विचारधारा की नहीं हो रही है, बात दरअसल मानसिकता की है। भगवा बैनर तले गलाफाड़ भाषण देने और बजरंगी पत्र 'पाञ्चजन्य' में अपना लेख छपवा लेने का सपना देखने वाले फफूंदिये विचारक (मैं जान-बूझकर उन्हें 'मार्क्सवादी' नहीं कह रहा) आत्माराम जी की मानसिकता ही कुछ ऐसी है।

यह आत्माराम जैसे कतिपय विचारकों की विडंबना ही है कि वे अपना शत्रु अभी तक निर्धारित नहीं कर पाये हैं। असल बात है कि इनके पास शत्रु की शिनाख्त कर सकने की कूव्वत ही नहीं है। इनके विचारों की बानगी तो आपने और 'बिगुल' से जुड़े साथियों ने तो देख ही ली, कुछ और भी प्रस्तुत हैं। मसलन, भारतीय जनता पार्टी ही देश की एकमात्र ऐसी पार्टी है, जो देश की बहुराष्ट्रीय कंपनियों के खूनी शिकंजे से बचा सकती है और मजदूरों के साथ-साथ समाज के सभी वर्गों का उद्धार कर सकती है। धोबीछाप चुनावी राजनीति के जरिये अगर पीपुल्स डेमोक्रेटिक रिवोल्यूशन लाना है, तो सभी कम्युनिस्टों को ध्रुवपात कर सीधे भाजपा से ही गठजोड़ कर लेना चाहिए -- और न जाने कितनी !

श्री आत्माराम देश के उस शहर के निवासी हैं, जहां भगवा शासन है और यह भगवाई शहर के साथ-साथ राज्य को कहां ले जा रहा है, यह उनकी तेज नजरों के दायरे में आने से चूक जाता है। महाराष्ट्र भाजपा ने विधानसभा चुनावों के पहले एनरान बहुराष्ट्रीय कंपनी की दाभोल विद्युत परियोजना को अरब सागर में डुबो देने की बात पर ही अपनी चुनावी रोटियां सेंकी थीं। क्या हुआ आखिर इस नेशनल बुर्जुआजी वाली पार्टी का, जो इंटरनेशनल इंपीरियलिज्म को येन-केन प्रकारेण रोकने का दावा करती है। (आत्माराम, जे.पी. दीक्षित एंड कंपनी के मुखकमलों के माध्यम से)

रही बात अंतर्राष्ट्रीयतावाद की, तो लेनिन ने एक जमाने में कहा था कि सर्वहारा का चरित्र अंतर्राष्ट्रीय चरित्र होता है। उसकी सामाजिक और परिवेशगत परिस्थितियां उसके चरित्र के उपवर्गों के निर्माण में अवदान करती हैं। एक तरफ साथी आत्माराम सर्वहारा-मजदूर वर्ग को एक सही पार्टी के नेतृत्व में संगठित होने की 'नेक सलाह' देते हैं (जैसे रणभूमि से दूर बैठा एक निखट्टू सेनापति अपनी ऐयाशी में डूबकर सेना को मोर्चे संभालने का निर्देश दे..), तो दूसरी तरफ यह भूल जाते हैं कि तमाम दुनिया के मजदूरों की भूख का कोई उपवर्ग नहीं होता। भूख एक अंतर्राष्ट्रीय समस्या है, साथी आत्माराम को यह बुनियादी बात अवश्य मालूम होनी चाहिए, फिर 'बिगुल' के अंतर्राष्ट्रीय होने से उन्हें क्योंकर परहेज? किसी पगलायी गाय की तरह लाल किताबों के पन्नों को चबा लेने से आत्माराम जैसे व्यक्ति को अपने लाल हो जाने का भ्रम जरूर हो जाता है, लेकिन 'बिगुल' सहित लाल रंग की कई किताबें अगर परोक्ष रूप से आदमी की भूख नहीं मिटा सकतीं, तो कम से कम इतना जरूर बता देती हैं कि आदमी को आदमी की तरह न जीने देने वालों के खिलाफ़ किस तरह एकजुट होकर संघर्ष किया जाये।

बिगुल के सभी साथियों को जोशीला लाल सलाम। साथ ही, एक आग्रह भी कि बिगुल को ऐसी फफूंदों से बचाये रखें।

-- गीत चतुर्वेदी
मुंबई

दुश्मन कितना अज्ञानी है!

कारागार हमें
हमारे मक़सद से दूर करेगा
अरे...रे...
दुश्मन कितना अविवेकी है!
लोहे पर हथौड़ा पड़ने से
लोहा नष्ट नहीं होता,
खंजर बन जाता है।
कारागार क्रांतिकारियों को
खंजर बनाकर और भी क़रीब ले जाता है।
झूठे मुठभेड़ हमें मिटा देंगे
अरे..रे..
दुश्मन कितना अज्ञानी है।
जाल से क्या कोई
समंदर की सारी मछलियां
खाली कर सकेगा?
जबतक है जनता का साथ
क्रांतिकारियों को मिटाना
किसी के बस की बात नहीं।
14.7.96

सुख के लिए दुख को गले लगाओ!

सुख चाहते हो
किन्तु दुख नही सह सकते
वाह रे दुनिया के स्वार्थियो !
अगर हर मां
इसी तरह बच्चा चाहती
जचगी के दर्द को सहे बिना
तो क्या
धरती पर इंसान का
नामोनिशान रहता?
नहीं- नहीं- नहीं ....
सुख के लिए दुख को
गले लगाना सीखो
वरना अनर्थ हो जायेगा।
21.7.96

बिगुल के साथियों को क्रांतिकारी अभिवादन!

- नईमोद्दीन एम.डी.
राजनीतिक क़ैदी, यू.टी.नं. 3804
ब्लॉक नं.- 3, सेण्ट्रल जेल
सिकंदराबाद - 500003

व्यवस्था बदलने में अपनी भूमिका तय करें

... सही मायने में बिगुल 'क्रांति का बिगुल' तभी कहलायेगा जब आज का शोषित, लाचार और बेबस मज़दूर अपनी गुलामी के संस्कार और किस्मत का फल न समझकर सिर्फ व्यवस्था जनित परिणाम माने तथा जाति -धर्म-सम्प्रदाय आदि के पूर्वाग्रहों से हटाकर एक पारदर्शी व्यवस्था के निर्माण हेतु कटिबद्ध होकर सभी अपनी भूमिका तय करें।

एक कविता

सुन! ऐ वतन ऐ वतन,
है बेचैन, मेरा मन।
हकों का हुआ है हनन,
उठ के धरा से आज हम
होवें सारे एक हम।
देशके उत्थान में,
नये कदम उठायें हम।
इन्सान की इन्सान से
दासता मिटायें हम।
इन्सान को इन्सान की,
बराबरी दिलायें हम।
सत्ता के बिच्छुओं की,
दौलत के भुजंगों की,
जन्म के जागीरदारों की,
सदियों के रजवारों की,
दीनता से हीनता की,
भावना मिटायें हम।
अब साक्षी ये धरती है,
पोषण, जो सबका करती है।
फिर बदलना इतिहास है,
बहुत हुआ ह्रास है।
सम्मान का ये द्वन्द्व है।
सांस जबतक चन्द है।
वह तोड़ना है रास्ता,
जो चक्रव्यूह बन्द है।
मान हो सम्मान हो,
देश पर कुर्बान हों।
दासता का देश में,
ना नामोनिशान हो।
सबको रोटी और कपड़ा,
अपना एक मकान हो।
सदेश है, ये देश को,
बदल दो परिवेश को।
है, चुनना मजबूत विकल्प,
ले आजादी का संकल्पं

-चंदन सिंह किरौला
ऊधमसिंहनगर

बिगुल का स्वरूप, उद्देश्य और ज़िम्मेदारियां

(1) 'बिगुल' व्यापक मेहनतकश आबादी के बीच क्रान्तिकारी राजनीतिक शिक्षक और प्रचारक का काम करेगा। यह मज़दूरों के बीच क्रान्तिकारी वैज्ञानिक विचारधारा का प्रचार करेगा और सच्ची सर्वहारा संस्कृति का प्रचार करेगा। यह दुनिया की क्रान्तियों के इतिहास और शिक्षाओं से, अपने देश के वर्ग संघर्षों और मज़दूर आंदोलन के इतिहास और सबक से मज़दूर वर्ग को परिचित करायेगा तथा तमाम पूंजीवादी अफवाहों-कुप्रचारों का भण्डाफोड़ करेगा।

(2) 'बिगुल' देश और दुनिया की राजनीतिक घटनाओं और आर्थिक स्थितियों के सही विश्लेषण से मजदूर वर्ग को शिक्षित करने का काम करेगा।

(3) 'बिगुल' भारतीय क्रान्ति के स्वरूप, रास्ते और समस्याओं के बारे में क्रान्तिकारी कम्युनिस्टों के बीच जारी बहसों को यह नियमित रूप से छापेगा और स्वयं ऐसी बहसें लगातार चलायेगा ताकि मज़दूरों की राजनीतिक शिक्षा हो तथा वे सही लाइन की सोच-समझ से लैस होकर क्रान्तिकारी पार्टी के बनने की प्रक्रिया में शामिल हो सकें और व्यवहार में सही लाइन के सत्यापन का आधार तैयार हो।

(4) 'बिगुल' मजदूर वर्ग के बीच लगातार राजनीतिक प्रचार और शिक्षा की कार्रवाई चलाते हुए सर्वहारा क्रान्ति के ऐतिहासिक मिशन से उसे परिचित करायेगा, उसे आर्थिक संघर्षों के साथ ही राजनीतिक अधिकारों के लिए भी लड़ना सिखायेगा, दुअन्नी-चवन्नीवादी भूजाछोर ''कम्युनिस्टों'' और पूंजीवादी पार्टियों के दुमछल्ले या व्यक्तिवादी-अराजकतावादी ट्रेडयूनियनबाजों से आगाह करते हुए उसे हर तरह के अर्थवाद और सुधारवाद से लड़ना सिखायेगा तथा उसे सच्ची क्रान्तिकारी चेतना से लैस करेगा। यह सर्वहारा ही कतारों से क्रान्तिकारी भरती के काम में सहयोगी बनेगा।

(5) 'बिगुल' मजदूर वर्ग के क्रान्तिकारी शिक्षक, प्रचारक और आह्वानकर्ता के अतिरिक्त क्रान्तिकारी संगठनकर्ता और आन्दोलनकर्ता की भी भूमिका निभायेगा।

बिगुल यहां से प्राप्त करें

- शहीद पुस्तकालय, द्वारा डा० दूधनाथ, जनगण होम्यो सेवा सदन, मर्यादपुर, मऊ
- जनचेतना, जाफरा बाजार, गोरखपुर
- विजय इन्फारमेंशन सेन्टर, कचहरी बस स्टेशन, गोरखपुर
- विश्वनाथ मिश्र, चेतना कार्यालय, बड़हलगंज, गोरखपुर–273402
- ओमप्रकाश, बाबा का पुरवा (पुराना), पेपर मिल रोड़, निशातगंज, लखनऊ
- जनचेतना स्टाल, काफी हाउस के पास, हजरतगंज, लखनऊ, (शाम 5 से 7)
- सत्यम वर्मा, यूनीवार्ता, काज़मी चैम्बर्स, 5 पार्क रोड, लखनऊ
- राहुल फाउण्डेशन, 3/274, विश्वास खण्ड, गोमतीनगर, लखनऊ
- अरविन्द सिंह, 123, बिडला छात्रावास, बी०एच०यू० वाराणसी
- डा. डी०क०. सचान, (शस्य वैज्ञानिक), A–308 आवास विकास (गंगापुर), रामपुर–244901
- प्रो. प्यारे लाल, 139, फूलबाग कालोनी, पन्तनगर कृषि विश्वविद्यालय, पन्तनगर–263145
- राजेन्द्र प्रसाद, रेनु मेडिकल की गली, मुख्य सड़क, रेणुकूट, सोनभद्र
- अमृतलाल पाण्डेय, निकट प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, बसखारी, जि० – अम्बेडकरनगर
- एतकाद अहमद, डिपार्टमेंट ऑफ फाउण्डेशन आफ एजुकेशन, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली
- संतोष शर्मा, Q-No -L/61K, बरौनी रेलवे कालोनी, बरौनी, बेगूसराय
- चन्द्रकेतु नरायण शर्मा, एडवोकेट, सांचीपट्टी, बागगली गाछी, स्थान–पो–हाजीपुर, जि–वैशाली
- दीपशिखा पत्रिका मंडप, द्वारा श्री शिवदास पाण्डेय, पानी टंकी चौकी, क्लब रोड, मुजफ्फरपुर
- मैत्रेयी साहित्य संगम, सर्वे आफिस के सामने, लालबाग के.डी.एस. दरभंगा–846004
- अविनाश कुमार सिन्हा/रणजीत कुमार श्रीवास्तव द्वारा शैलेन्द्र श्रीवास्तव, बरियारी चक, मेंहसी, पूर्वी चम्पारण
- जनार्दन थापा, लुकसान बाज़ार, पो.कैरन जि. जलपाईगुड़ी – 735205
- डा.हरियश राय, ए–205 सुजल अपार्टमेंट, सेटेलाइट रोड, रामदेव नगर, अहमदाबाद–380054
- पुस्तक–पत्रिका बिक्री–वितरण केन्द्र डिल्ली बाजार चढ़ाव के पास (निकट पद्म कन्या स्कूल), काठमांडू
- विशाल पुस्तक पसल, अस्पताल लाईन, बुटवल, लुम्बिनी, नेपाल
- जलजला पुस्तक सदन, धमवोजी चौक, नेपालगंज बांके, नेपाल

मुनाफाखोरी की अंधी हवस में लाखों लोगों की जिन्दगी दांव पर लगी

(पृष्ठ 1 का शेष)

पिछले दिनों विश्व बैंक की एक टीम ने धनबाद के आग प्रभावित क्षेत्रों के सर्वेक्षण के बाद अपनी रिर्पोट में यह गंभीर चेतावनी दी कि लोदना, तिसरा, झरिया और इसके आसपास का इलाका कभी भी धंस सकता है और यहां की पूरी आबादी आग की चपेट में आ सकती है। रिपोर्ट में इस क्षेत्र में रहने वाली पूरी आबादी को जल्दी से जल्दी हटाकर कहीं और बसाने का सुझाव दिया गया है।

विश्व बैंक की टीम ने सर्वोच्च प्राथमिकता वाले तेरह आग प्रभावित क्षेत्रों के अध्ययन के बाद पाया कि आठ क्षेत्रों में आग का प्रभाव कुछ कम हुआ है पर उसे नियंत्रित नहीं किया जा सका है। दो क्षेत्रों में आग और फैली है। तीन क्षेत्रों में आग अभी निष्क्रिय है। अलकुसा में आग 230 प्रतिशत और राजापुर में 11 प्रतिशत बढ़ी है जिससे समीपवर्ती आबादी एकदम मौत के साये में जी रही है तथा सड़क को भी खतरा है। पिछले वर्ष सितंबर में 64 लोगों के डूबकर मरने से चर्चित गजलीटांड खान में आग का प्रभाव कुछ कम होने के बावजूद कतरी नदी के बांध और आसपास के गांवों पर खतरा बरकरार है। पूर्वी तेतुलमारी में आग का प्रभाव दस प्रतिशत और बढ़ गया है। साथ ही खदानों में पानी भरने का ख़तरा है जिससे आग के निचले हिस्सों में विस्तार हो सकता है। पश्चिम तेतुलमारी में आग का प्रभाव मापा नहीं जा सका। जोगता में आग घटी है, पर जोगता गांव पर ख़तरा बरक़रार है। सेन्द्रा और बांसजोड़ा में आग 20 प्रतिशत कम हुई है, लेकिन खानों में पानी भर जाने का ख़तरा है। लोयाबाद कोलियरी के कोयला भंडारों के भी आग की चपेट में आ जाने की आशंका है। इससे एकरा नदी के बांध को भी ख़तरा है।

दूसरे दौरे में विश्व बैंक की टीम ने दूसरी प्राथमिकता वाले चौदह आग प्रभावित क्षेत्रों का अध्ययन किया जिसकी रिपोर्ट के अनुसार ऐना और वंशदेवपुर में आग में कमी आई है, परन्तु खदानों में पानी भर जाने का ख़तरा है। यही आशंका करकेन्द्र और समीपवर्ती खानों के बारे में भी प्रकट किया गया है। कुस्तौर में भी आग के प्रभाव में कमी के बावजूद सड़क और आसपास की आबादी के लिए ख़तरा बढ़ गया है। पूर्वी भगतडीह, गोपालीचक और बसेरिया में आग का प्रभाव कुछ कम हुआ है पर आबादी क्षेत्र, सड़क और रेलमार्ग के लिए धंसने का खतरा बरकरार है।

पूर्वी रेलवे को दक्षिण-पूर्व रेलवे से जोड़ने वाली धनबाद-पाथरडीह रेलवे लाइन दो हज़ार मीटर तक आग के कारण किसी भी समय धंस सकती है। इस लाइन पर धनबाद-टाटा सुवर्णरेखा एक्सप्रेस और कई अन्य यात्री गाड़ियां चलती हैं। यदि इस लाइन को जल्दी नहीं हटाया गया तो कभी भी कोई बड़ी दुर्घटना घट सकती है। ब्लॉक-तीन में लगी आग से आन्द्रा-गोमो रेल लाइन के लिए भी खतरा बना हुआ है।

धनबाद के कोयला खदानों में बरसों से लगी इस आग में अरबों का कोयला जलकर राख हो चुका है और अभी स्थिति यह है कि मौजूदा संसाधनो से आग पर काबू पाने की पूरी कोशिशें यदि की जायें, तो भी अरबों रुपये का कोयला जल चुका रहेगा। रेल-लाइनों और सड़कों के अलावा नदियों और बड़े नाले पर बनाये गये बांधो को भी खतरा है। और सबसे बड़ी बात यह है कि अब कम से कम तीन लाख लोगों की ज़िन्दगी पर मंड़राता मौत का साया भी गहराता जा रहा है।

धनबाद के कोयला खानों में लगी इस आग का कारण प्राकृतिक आपदा नहीं बल्कि थैलीशाहों के मुनाफे की अंधी हवस है। पिछली कई रिपोर्टों में विशेषज्ञों के दलों ने स्वीकार किया है कि 1972 में हुए राष्ट्रीकरण के पहले निजी मालिकों द्वारा अंधाधुंध, अवैज्ञानिक और अनियोजित ढंग से किये गये खनन के कारण ही खानों में आग लगी और फैलती गई।

धनबाद में पिछले डेढ़ सौ वर्षों से कोयला निकालने का काम चल रहा है। सभी ख़ाने निजी मालिकों के हाथों में थीं जिनके मातहत खान मज़दूरों की ज़िन्दगी खानों में काम करने वाले रोम के दासों जैसी बदतर थी। खनन का काम बिना किसी योजना के होता था। आज़ादी के बाद भी पच्चीस वर्षों तक कमोबेश यही स्थिति बरकरार रही। ट्रेड यूनियनों में संगठित मज़दूरों ने अपने हक़ों के लिए कुछ संघर्ष किये और उनकी कुछ उपलब्धियां भी रहीं। पर सातवें दशक तक पूंजीवादी चुनावी राजनीति में आई गिरावट और भारतीय वामपंथी दलों -- सी.पी.आई. - सी.पी.एम. के पतन के बाद धनबाद के ट्रेडयूनियन आंदोलन भी गुण्डों, माफिया सरदारों और ट्रेड यूनियन नौकरशाहों की गिरफ्त में फंसता चला गया।

1972 में समाजवाद की दुहाई देने वाली इन्दिरा सरकार ने कोयला उद्योग का राष्ट्रीकरण कर दिया पर इससे इस उद्योग और कामगारों की स्थिति पर कोई फर्क नहीं पड़ा! उल्टे स्थिति कुछ मामलों में पहले से भी बदतर हो गई। दुनिया के सबसे बड़े कोयला क्षेत्रों में एक-इस कोयला क्षेत्र में सरकारी अफसरों-ठेकेदारों-व्यापारियों और गुण्डे ट्रेडयूनियन नेताओं की चंहुमुखी गिरफ्त में मजदूर वर्ग की आज़ादी, अधिकार और खुशहाली की उम्मीदें कैद हो गई।

सरकार ने न तो कोयला-उत्खनन की तकनीक के आधुनिकीकरण पर कोई जोर दिया, न ही योजनाबद्ध खनन और मज़दूरों की सुरक्षा पर ही कोई ध्यान दिया गया। चासनाला और गजलीटांड जैसी खान दुर्घटनाएं और पचासों छोटी खान दुर्घटनाएं इसी लापरवाही का नतीजा है और आग लगने तथा अरबों के नुकसान के बावजूद उसपर अबतक काबू न पाये जाने का यही एकमात्र कारण है, और कुछ भी नहीं।

धनबाद में आग के प्रभाव वाली सभी खानें भारत कोकिंग कोल लिमिटेड(बी.सी.सी.एल.) के अन्तर्गत आती है। बी.सी.सी.एल. के प्रवक्ता के अनुसार आग पर काबू पाने के लिए अबतक कुल अस्सी करोड़ रुपये खर्च किये गये हैं। यूं तो नुकसान की भयंकरता और लाखों लोगों की ज़िन्दगी पर मंड़राते खतरे को देखते हुए कई वर्षों में किया गया यह खर्च कुछ अधिक नहीं, पर इस खर्च की वास्तविकता भी यह है कि रकम का बड़ा हिस्सा अधिकारीगण मिलीभगत करके खा गये। कहने की जरूरत नहीं कि लूट के माल का हिस्सा नेताओं और ट्रेड यूनियन के सरदारों को भी मिला होगा।

अभी तक धनबाद में आग पर काबू पाने के प्रयास के तहत किया यह जाता है कि आग लगे हिस्से को अलग कर दिया जाता है तथा सतह पर बालू और मिट्टी बिछाकर आक्सीजन को आग तक पहुंचने से रोका जाता है। आज खानों में लगी आग बुझाने की इससे उन्नत तकनीकें दुनिया में मौजूद हैं। सवाल यह है कि बिजली और कार से लेकर नमकीन और कोल्ड ड्रिंक बनाने तक में विदेशी कंपनियों से सौदा समझौता करने वाली इंदिरागांधी, राजीव गांधी, नरसिंह राव और देवगौड़ा की सरकारों ने विदेशों से आग बुझाने की उन्नत तकनीकों की सहायता क्यों नहीं लिया? देश की ऊर्जा का मुख्य स्रोत आज भी कोयला है और इससे करोड़ों लोग सीधे रोजी पाते हैं। फिर सरकार ने उत्खनन की उन्नत तकनीकों और आग बुझाने की उन्नत तकनीकों पर शोध-अध्ययन पर ध्यान क्यों नहीं दिया? उत्तर साफ है। पूंजीपतियों और उनकी सरकार को मुनाफे से मतलब है। सरकारी कोयला निकलता रहे, उससे बनी बिजली से पूंजीपतियों के कारखाने चलते रहें, खानों के अधिकारी, ठेकेदार, व्यापारी, राजनेता और ट्रेड यूनियन नेताओं की चांदी कटती रहे, तो उत्खनन पद्धति को वैज्ञानिक बनाने और आग बुझाने की भला क्या जरूरत? मुनाफाखोर तो ठीक नाक के आगे देखते है और सिर्फ अपने मुनाफे की सोचते हैं। आज तो मुनाफा हो रहा है, कल की क्यों सोचें? उन्हें इससे क्या वास्ता कि अरबों का कोयला जलकर राख हो रहा है और रेल लाइनों, बाधों, सड़कों, बस्तियों को ख़तरा है? उन्हें इससे क्या मतलब कि तीन लाख लोगों की जान को खतरा है।

यदि कोई दुर्घटना हो भी जाये तो क्या होगा? करोड़ों बेकार लोगों में से लोग जगह भरने के लिए आ जायेंगे। रेल-लाइन, सड़कें, बांध आदि टूट भी जायें तो उन्हें बनाने के लिए फिर टेण्डर निकलेंगे, ठेके दिये जायेंगे और ठेकेदार, समाज बनाने वाले पूंजीपति, सप्लाई करने वाले व्यापारी, कमीशन खाने वाले अफसर और इन सबसे वसूली करने वाले नेता -- इन सबकी तो चांदी ही होगी!

इसलिए खानों में लगी आग के बारे में यह हुकूमत और इसके कारिन्दे कतई नहीं सोचेंगे। बी.सी.सी.एल. के प्रवक्ता ने स्वयं स्वीकार किया कि विश्व बैंक के विशेषज्ञों ने अध्ययन के बाद सुझाव और तकनीक रिपोर्ट कम्पनी को सौंप दी है, लेकिन कम्पनी के वित्तीय संकट को देखते हुए आग पर पूरी तरह काबू पाने के लिए खर्च लायक धन जुटा पाना संभव नहीं है।

सोचने की बात है जिस देश में सिर्फ केन्द्र और राज्य की सरकारों के मंत्री ही हर वर्ष खरबों के घोटाले करते हों, अरबों के घोटाले जहां अफसर और छुटभैये नेता करते हों, वहां तीन लाख लोगों की जान और जनता की खरबों की सम्पदा की सुरक्षा का इंतजाम करने के लिए सरकार के पास पैसे नहीं हैं!

नहीं, ये सरकारें इस तरह सुनतीं। मज़दूर वर्ग को याद करना होगा और यह जानना ही होगा कि ऐसे बहरों को सुनाने के लिए क्या किया जाता है!

(प्रांजल फीचर सेवा)

भिलाई स्टील प्लाण्ट में चार मजदूरों की मौत

मजदूर की जिन्दगी इतनी सस्ती क्यों?

भिलाई स्टील प्लाण्ट के मैनेजमेण्ट, प्राइवेट ठेकेदारों और खाऊ-कमाऊ ट्रेडयूनियन नेताओं की आपसी मिलीभगत की वजह से यहां आये दिन मज़दूरों की मौतें हो रही है।

पिछले दिनों ऐसे ही चार मज़दूरों की मौत का मामला प्रकाश में आया। बताया जाता है कि संयंत्र के प्राइवेट ठेकेदार सुरेश मल्होत्रा की देखरेख में ब्लास्ट फर्नेश सं. 6 के कास्ट हाउस स्लेग ग्रेनुलेशन प्लाण्ट की 50 फीट गहरी टंकी में आवास इंजीनियरी के मज़दूर काम कर रहे थे। उस समय मज़दूर सुरक्षा उपकरण, सेफ्टी बेल्ट, हैल्मेट -- कुछ भी नही पहने हुए थे। इनमें से चार मज़दूर टंकी के अंदर पेट की गैस की चपेट में आकर बेहोश होकर गिर गये और मौत के मुंह में समा गये।

प्रत्यक्षदर्शियों के अनुसार, होश में आने पर उन मज़दूरों ने जोर से चिल्लाना शुरू किया। वहां इकट्ठा हुए लोगों ने संयंत्र के फायर ब्रिगेड को सूचना दी। पर फायर ब्रिगेड बचाव दल के कर्मी भी टंकी में उतरते ही गैस के असर से बेहोश हो गये। उनके साथियों ने उन्हें फौरन निकालकर अस्पताल पहुंचाया। नीचे फंसे चार मज़दूरों को चार घण्टे बाद क्रेन की मदद से निकाला गया पर तबतक वे मर चुके थे।

इस घटना को लेकर संयंत्र के मैनेजमेण्ट और ठेकेदारों के खिलाफ मज़दूरों में जबर्दस्त गुस्सा है। उनका आरोप है कि संयंत्र के सुरक्षा विभाग, ठेकेदारों और विभागीय अधिकारियों की मिलीभगत से मज़दूरों की जिन्दगी के साथ खिलवाड़ किया जा रहा है। मजदूरों सुरक्षा का कोई इंतजाम नही है। मैनेजमेण्ट के साथ मिलीभगत किये हुए ट्रेड यूनियनों के नेता भी कुछ रस्मी दिखावे की कार्रवाइयों के अलावा कुछ नहीं करते।

चार मज़दूरों की मौत के बाद भी ऐसा ही हुआ। जिलाधिकारी ने दुर्घटना की जांच के आदेश दे दिये। यूनियन संघों के पदाधिकारियों ने मृत मज़दूरों को श्रद्धांजलि दे दी, बदस्तूर मैनेजमेण्ट के खिलाफ कुछ गरमागरम भाषण दाग दिये तथा मृत मजदूरों के परिवारों के लिए दो-दो लाख रुपये हरजाने तथा एक-एक आश्रित को नौकरी की मांग कर दी। सभी रस्म अदा हो गये। आंसू पोंछने के लिए काफी कोशिश के बाद कुछ हरजाना मिल भी जायेगा। पर सवाल तो यह है कि ऐसी घटनाएं क्यों हो रही हैं और कब तक होती रहेंगी? यूनियन नेताओं के पास इसका कोई जवाब नहीं है। जिम्मेदार लोगों को दण्डित क्यों नही किया जाता और सुरक्षा के उचित प्रबंध क्यों नही किये जाते? यूनियनें इसके लिए संघर्ष क्यों नहीं करती? -- सभी यूनियन नेता कुछ नही कहते।

मज़दूरों ने बताया कि ब्लास्ट फर्नेस न. 6 एक आधुनिक तकनीकी युक्त फर्नेस है जिसमें स्लेग और मेटल एक ही स्थान पर अलग-अलग होकर गिरता है। स्लेग को कास्ट हाउस स्लेग ग्रेनुलेशन प्लाण्ट में ही पानी के प्रेशर से ठंडा किया जाता है। यह पानी जिस टंकी से होकर जाता है उसे ही दो वर्षों बाद पेंट कराया जा रहा था। लाखों रुपये का चूना लगाने की नीयत से ठेकेदान ने पेंट में थिनर की मात्रा बहुत अधिक कर दी थी जिससे टंकी में जहरीली गैस भर गई और इसकी चपेट में आकर चार मज़दूरों को अपनी जानें गंवानी पड़ी।

-- बिगुल संवाददाता

शहडोल (म.प्र.) से प्राप्त एक समाचार (स्रोतः भाषा समाचार एजेंसी, 19 मई) के अनुसार, दक्षिण-पूर्वी कोयला खदान के हंसदेव एरिया अंतर्गत झीमर कोयला खदान नं. 4 में पिछले दस वर्षों से जल रही भीषण आग आज तक बदस्तूर जल रही है।

इस आग के कारण खदान की ऊपरी सतह पर कई जगह दरारें पड़ गई हैं और कई जगह भूमि धसक कर खाई नुमा हो गई है। इससे आसपास रहने वाले हज़ारों ग़रीबों की आबादी की ज़िन्दगी के लिए ख़तरा पैदा हो गया है। यही नहीं इस आग के कारण ज़मीन के अंदर से निकलने वाली कार्बन मोनोआक्साइड नामक ज़हरीली गैस का आसपास की आबादी के स्वास्थ्य पर गंभीर दुष्प्रभाव पड़ रहा है।

आग के कारण उक्त खदान में कोयला उत्पादन कार्य 1984-85 में ही बंद कर दिया गया, पर आग बुझाने का कोई उपाय नहीं किया गया। इससे करोड़ो का कोयला नष्ट हो चुका है और यह सिलसिला आज भी लगातार जारी है। खदान बंद हो जाने के बाद वहां के कुछ श्रमिकों को न्यू झीमर पौराधार की इंदिरानगर कालोनी में बसाहट दे दी गई, पर आर्थिक रूप से कमजोर बहुतेरे मज़दूर परिवारों को उपेक्षित छोड़ दिया गया। ऐसे सैकड़ों परिवार आज भी खदान के आसपास के ख़तरनाक क्षेत्र में मौत के साये में ज़िन्दगी बसर करने के लिए मजबूर हैं।

आज के राजनीतिक हालात और आने वाले विस्फोटक समय के बारे में सोचना होगा और अपने कार्यभार तय करने होंगे!

(पेज 1 से आगे)

था, अब वह एकदम फासीवादी ढंग से और नंगे रूप में खेला जा रहा है। कांग्रेस तो घोटालों की गटरगंगा में डुबकियां लगा ही रही है, दूसरे दल भी बेदाग़ नहीं हैं। अकेले बिहार का पशुपालन घोटाला ही बोफोर्स घोटाले से भी बड़ा है। बोफोर्स घोटाले के खिलाफ बोलकर सदाचार का मसीहा बनने वाले वी.पी. सिंह चुप हैं। कथित वामपंथी ज्योति बसु की सरकार भी वक्फ बोर्ड सम्पत्ति घोटाले और भ्रष्टाचार के कई मामलों में फंसी है। सामाजिक न्याय का बेलून पिचक चुका है। दलित मुक्ति के नाम पर उग्र जातिवादी नारे उगलने और गांधी एवं कांग्रेस को पानी पी-पीकर गाली देने वाली बहुजन समाज पार्टी कांग्रेस से राष्ट्रीय स्तर पर गठजोड़ कर चुकी है। इसके पूर्व उ.प्र. में सपा से और फिर भाजपा से और पंजाब से अकाली दल से भी वह गंठबंधन कर चुकी है। अजीत सिंह कांग्रेस से बाहर निकलने के लिए हर दरवाजा झांकने के बाद अब टिकैत निर्मित कामगार-किसान पार्टी के अध्यक्ष बन गये हैं और जनता दल, समाजवादी पार्टी और चुनावबाज वामपंथियों के संयुक्त मोर्चे के साथ गांठ जोड़कर चुनावी समर में उतरे हुए हैं। निकृष्टतम कोटि के अवसरवादी समाजवादी जार्ज फर्नाण्डीज़ की समता पार्टी भाजपा से गठबंधन के नाम पर पूरी वफादारी जाहिर करके भीख की झोली में पांच-सात सीटें चुनाव लड़ने के लिये पा चुकी है। इन तीनों गठबंधनों में टक्कर है। अलग-अलग चुनावी पण्डित लोग अपने-अपने पूर्वानुमानों में इन तीनों के पक्ष में अपनी राय जाहिर कर रहे हैं या फिर त्रिशंकु विधानसभा की आशंकाएं प्रकट कर रहे हैं।

परिस्थिति एकदम अस्पष्ट और तरल है जैसीकि अभूतपूर्व संकट के समय और सामाजिक विस्फोटों की पूर्वबिला हुआ करती है।

II. आर्थिक नवउपनिवेशवाद के नये दौर में भारतीय पूंजीवादी संसदीय राजनीति के स्वरूप में भी बदलाव आये है!

आज इसतरह की चर्चा कमोबेश बेमानी हो चुकी है कि कौन सी पूंजीवादी चुनावी पार्टी मुख्यतः, शासक वर्गों में से किस एक वर्ग की और उसके किस एक धड़े की नुमाइन्दगी करती है। उदारीकरण और निजीकरण की अर्थनीति के दौर की जरूरतों और मजबूरियों ने भारतीय पूंजीवादी संसदीय राजनीति के स्वरूप को काफी हद तक बदला है। राजनीतिक आज़ादी मिलने के पहले से लेकर बाद के लगभग चार दशकों तक कांग्रेस बड़े और इजारेदार पूंजीपति वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाली सर्वप्रमुख पार्टी बनी रही। उसमें छोटे पूंजीपतियों व्यापारियों और नये-पुराने बड़े भूस्वामियों के हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले अलग-अलग कुछ धड़े जरूर थे। कांग्रेस का मुख्य सामाजिक आधार दलित जातियों, मुसलमानों और ब्राह्मणों के बीच था। भूतपूर्व जनसंघ, फिर जनता पार्टी में शामिल जनसंघी गुट और फिर भारतीय जनता पार्टी पहले मुख्य रूप से शहरी बड़े व्यापारियों का और समग्र रूप में भारतीय पूंजीपति वर्ग के हितों का प्रतिनिधित्व करती थी। गांवों में भूमि-संबंधों के क्रमिक पूंजीवादी रूपान्तरण से मजबूत हुए कुलकों-पूंजीवादी भूस्वामियों-फार्मरों के वर्ग ने अपनी अलग-राजनीतिक उपस्थिति चरणसिंह की राजनीति के रूप में दर्ज करानी शुरू की। बाद में टिकैत, शरद जोशी, नायडू, मान आदि के संगठनों से लेकर देवीलाल, मुलायम सिंह आदि के धड़े इसी पूंजीवादी भस्वामी वर्ग के हितों की नुमाइन्दगी करते रहे। भांति-भांति के बनते-बिगड़ते समाजवादी दलों से लेकर मज़दूर वर्ग से गद्दारी किये हुए संशोधनवादी कम्युनिस्ट पार्टियों तक, छोटे पूंजीपतियों, छोटे व्यापारियों और खाते-पीते खुशहाल मध्यम वर्ग तथा कुलीन मज़दूरों के हितों की नुमाइन्दगी करते थे।

विगत लगभग 20 वर्षों के दौरान पूंजीवादी राजनीतिक पार्टियों की स्थिति और समीकरणों में व्यवस्था के संकट के गहराते जाने के साथ ही महत्वपूर्ण परिवर्तन आये हैं। इस दौरान सभी शासक वर्गों के बीच एक ओर तो लूट और मुनाफे के बंटवारे को लेकर खींचतान बढ़ती गई है, दूसरी ओर पूंजीवादी विकास की आम दिशा और आम नीतियों के प्रश्न पर, व्यापक मेहनतकश आबादी को निचोड़ने और कुचलने के प्रश्न पर वे ज्यादा एकजुट होते गये हैं।

आपतकाल ने शासक वर्ग को 1977 में "जनता पार्टी प्रयोग" के लिए विवश किया। इस नये दल में बड़े पूंजीपतियों के प्रतिनिधियों के अतिरिक्त छोटे पूंजीपतियों, बड़े-छोटे व्यापारियों, पूंजीवादी भूस्वामियों-कुलकों और उच्च मध्य वर्ग के प्रतिनिधियों के धड़े भी शामिल थे। इनकी आपसी खींचतान से जनता-शासन असमय ही काल-कवलित हो गया। नवें दशक में इन्दिरा और राजीव की अगुवाई में भारतीय बड़े पूंजीपतियों और साम्राज्यवादियों की पुरानी भरोसेमंद पार्टी कांग्रेस ने तीस वर्षों पुरानी नेहरूपंथी "समाजवादी" मुखौटे वाली पूंजीवादी नीतियों को धीरे-धीरे त्यागकर निजीकरण-उदारीकरण की खुली पूंजीवादी नीतियों को लागू करने की दिशा में कदम बढ़ाया। और फिर नई आर्थिक नीति के नाम पर इन नीतियों को एकदम खुले रूप में लागू करके भारतीय पूंजीवाद को आर्थिक नवउपनिवेशवाद के नये दौर में प्रवेश कराने और कुछ दूर तक आगे बढ़ाने की फैसलाकुन कार्रवाई को भी कांग्रेस ने ही अंजाम दिया 1991-95 के बीच नरसिंह राव के शासन काल के दौरान।

भारतीय पूंजीपति वर्ग और साम्राज्यवादी हितों की यह अंतिम ऐतिहासिक सेवा करके कांग्रेस अब स्वयं क्षरित-विघटित होती जा रही है। भारतीय शासक वर्ग नये विकल्पों की तलाश कर रहे हैं। नये समीकरण और गठबंधन बन और बिगड़ रहे हैं। एक तरल और अस्पष्ट परिस्थिति विद्यमान है जिसे व्यवस्था के लाइलाज हो चुके रोग और अधिक अस्पष्ट और अस्थिर बना रहे हैं।

III. नई आर्थिक नीति शासक वर्गों के सामने एकमात्र विकल्प है!

स्थिति यह है कि आज भारत में (और सिर्फ भारत में ही नहीं, एशिया-अफ्रीका-लातिन अमेरिका के उन तमाम पूर्व औपनिवेशिक देशों में जहां के शासक पूंजीपति वर्ग आज अपनी जरूरतों और मजबूरियों से, पूरीतरह साम्राज्यवाद के जूनियर पार्टनर बनने की स्थिति स्वीकार कर चुके हैं) किसी भी दल या गठबंधन के पास नरसिंह राव-मनमोहन सिंह की नई आर्थिक नीतियों का कोई विकल्प नहीं है। जो वामपंथी दल, जनता दल, स.पा आदि नई आर्थिक नीति के खिलाफ चन्द एक वर्षों पहले तक "स्वदेशी" आदि के मंत्रोच्चार किया करते थे, उन्हीं की संयुक्त मोर्चा सरकार आज कांग्रेस के समर्थन से उन्हीं नीतियों को मुस्तैदी से लागू कर रही है। महज चन्द हफ्तों तक जीवित रहने वाली केन्द्र की भा ज पा सरकार ने भी उदारीकरण और निजीकरण की नीतियों के प्रति प्रतिबद्धता जाहिर करके "भगवा स्वदेशी" की असलियत उजागर कर दी थी। वामपंथी दल ऊपरी तौर पर भले ही नई आर्थिक नीतियों का रस्मी विरोध करते हों, बंगाल में विदेशी कंपनियों और विदेशी पूंजी को न्यौते में, निजी उद्योगपतियों को हर तरह की छूट देने में, छंटनी और तालाबन्दी के जरिये मज़दूरों की रोजी-रोटी छीनने में और हड़तालों को कुचलने में ज्योतिबसु की सरकार किसी से पीछे नहीं रही है। यदि स्थिति उ.प्र. में मुलायम, कल्याण सिंह और मायावती की सरकारों की, बिहार में लालू की और कर्नाटक में देवेगौड़ा की तथा महाराष्ट्र में शिवसेना-भाजपा सरकार की और राजस्थान में भा ज पा सरकार की थी और आज भी है। केन्द्र और राज्यों में सत्ता पर काबिज होने के लिए ये दल भले ही एक-दूसरे को महंगाई-बेरोजगारी, मंहगी शिक्षा और मंहगी स्वास्थ्य सुविधाओं तथा छंटनी-तालाबंदी आदि के लिए कोसें तथा तरह-तरह के राहत देने के वायदे करें, पर सब के सब उदारीकरण और निजीकरण की नीतियों के पक्षधर हैं, क्योंकि पूंजीवादी दायरे के भीतर आज यही एक विकल्प है। आम जनता के श्रम को निचोड़कर अर्जित मुनाफे में अपने-अपने हिस्से को लेकर साम्राज्यवादी लुटेरे, भारतीय बड़े पूंजीपति, छोटे पूंजीपति, बड़े व्यापारी, कुलक-भूस्वामी आदि एक दूसरे से खूब खींच-तान मचाये हुए है, पर नई आर्थिक नीतियों के सवाल पर उनमें पूर्ण मतैक्य है। मंहगाई-बेरोजगारी से तबाह-बदहाल अवाम यदि सड़कों पर उतरता है तो उसे कुचल देने की पूरी तैयारी रखने तथा मौका आने पर खुली निरंकुश सत्ता की बहाली कर देने के मुद्दे पर इनमें कोई मतभेद नहीं है।

IV. सिर्फ सत्ता के लिए है जाति और धर्म की राजनीति और भांति-भांति के अवसरवादी गठबंधन!

पर सत्ता के लिए आपस में कुत्ताघसीटी और जोड़तोड़ तो पूंजीवादी राजनीति का तकाजा है। और व्यवस्था के संकट के दौर में इस मार-काट और छीना-झपटी का बढ़ जाना लाजिमी है।

चूंकि बुनियादी आर्थिक मुद्दों पर शासक वर्गों की इन सभी पार्टियों में कोई मतभेद नहीं है, इसलिए जनता को जाति-धर्म की लाइनों पर बांटने वाले हर तरह के नारे इस्तेमाल में लाये जा रहे हैं। भ्रष्टाचार-विरोध और घोटाले का मुद्दा भी अब काम नहीं आ रहा है क्योंकि इस मुद्दे को भुनाने के चक्कर में इन सभी दलों ने एक दूसरे को नंगा कर दिया है और दिखा दिया है कि सभी एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं। बुनियादी नीतियों की अपरिवर्तनशीलता के बारे में चूंकि साम्राज्यवादी भी निश्चिंत हैं और भारतीय पूंजीपति भी, इसलिए वे हर दल या गठबंधन को (जिसकी भी स्थिति बेहतर बनती दीखे) आजमाने के लिए तैयार हैं। इसीलिए, पूंजीवादी व्यवस्था की अंतिम सुरक्षा पंक्ति के रूप में काम करने वाले नकली वामपंथियों के भाग्य का छींका भी पहली बार टूटा है और भा क पा के इंद्रजीत गुप्त आज केन्द्र में गृहमंत्री की कुर्सी पर विराजमान हैं।

बहुजन समाज पार्टी जिसने दलितों की मुक्ति के नाम पर दलित जातियों में तेजी से अपना सामाजिक आधार बनाया है, वास्तव में दलित जातियों के बीच से पनपे मुट्ठी भर खुशहाल शहरी मध्यवर्ग और अफसरों के हितों की नुमाइंदगी करती है और अपने चरित्र एवं विचारों से घोर दक्षिणपंथी और फासिस्ट प्रकृति की पार्टी है। गांधी को गाली देने वाली यह पार्टी स पा और भाजपा के बाद अब कांग्रेस से गठबंधन बनाकर उ.प्र. विधानसभा के चुनावी समर में है। साम्प्रदायिक जुनून और स्थिरिता के नाम पर भाजपा अपनी पुछल्ली समता पार्टी के साथ गांठ जोड़कर चुनाव लड़ रही है। तीसरी ओर, केन्द्र में सत्तासुख संयुक्त मोर्चा टिकैत-अजीत सिंह की कामगार-किसान पार्टी से मोर्चा बनाकर चुनाव लड़ रही है। उ.प्र. में संयुक्त मोर्चे में जनता दल और वामपंथी तो महज मुलायम सिंह के कृपाकांक्षी के रुप में ही हैं।

उ.प्र. के इन चुनावों के नतीजों पर शासक वर्गों और उनकी पार्टियों के नेतृत्व की निगाहें इसलिए टिकी हैं, क्योंकि इससे केन्द्र के समीकरणों पर काफी फर्क पड़ सकता है जहां कांग्रेसी मदद की बैसाखी खींचते ही संयुक्त मोर्चा सरकार धराशायी हो जायेगी और मध्यावधि चुनाव की स्थिति उत्पन्न हो जायेगी। नई स्थितियों में नये समीकरण बनाने की संभावनाओं पर विचार और कोशिशें संकटग्रस्त कांगिसी शिविर में भी चल रही हैं और जनता दल के भीतर भी। हेगड़े और चन्द्रशेखर भी अनुकूल अवसर के लिए घात लगाये अपनी गोटियां चल रहे हैं। इस पूरे परिप्रेक्ष्य में उत्तर प्रदेश विधान सभा चुनाव पर सबकी निगाहें टिकी हुई हैं।

V. पूंजीवाद ज्वालामुखी के दहाने पर बैठा है!

इस पूरी स्थिति पर मेहनतकश वर्गों और क्रांतिकारी राजनीतिक शक्तियों को भी सतर्क नज़र रखने की और इनमें छिपे भविष्य के गहरे निहितार्थों को समझने की ज़रूरत है। पूंजीवादी चुनावी राजनीति की मौजूदा झांकी पूरी पूंजीवादी व्यवस्था के गंभीर संकटों का और इनके गर्भ में पल रहे अभूतपूर्व रूप से विस्फोटक भावी परिस्थितियों का पूर्वाभास और बोध करा रही है। भारतीय इतिहास कदम-ब-कदम अगली सदी में फूट पड़ने वाले क्रांतिकारी संकट की चुनौतीपूर्ण कठिन घड़ी की ओर कदम बढ़ा रहा है। क्रान्तिकारी मेहनतकश वर्ग और उनके हिरावल दस्ते को सतर्क हो जाना होगा और कठिन तैयारियों में लग जाना होगा।

भगतसिंह के शब्दों का इस्तेमाल करते हुए कहें तो पूंजीवाद आज एक ज्वालामुखी के दहाने पर बैठा हुआ है। मेक्सिको, चिली, पेरू आदि जिन लातिन और मध्य अमेरिकी देशों ने नई आर्थिक नीतियों जैसी नीतियां डेढ़ दशक पहले लागू की, उन देशों में व्यापक क्रांतिकारी संघर्ष कई रूपों में पहले ही फूट चुके हैं। पेरू के क्रांतिकारी संघर्ष से लेकर मेक्सिको के चियापास किसान संघर्ष के बारे में आज सभी जागरूक लोग जानते हैं। अब यह लहर एशिया में भी प्रविष्ट हो चुकी है। इण्डोनेशिया फिलीपीन्स दक्षिण कोरिया और थाईलैण्ड से लेकर बर्मा, बंगला देश, नेपाल तक मजदूर-किसान, छात्र-युवा आज या तो सड़कों पर उतर चुके हैं या इस तैयारी में हैं। भारत में भी यही स्थिति तेजी से तैयार हो रही है। और इस स्थिति को भांपकर सत्ता ने भी अपने दमन-तंत्र को चाक-चौबन्द करना शुरू कर दिया है।

ऐसी स्थिति में, हमारे लिए भी यह सुनिश्चित कार्यभार तय करने का समय है।

VI. मेहनतकशों के हिरावल दस्तों को अपने स्पष्ट कार्यभार तय करने होंगे

आज बेहद ज़रूरी है कि क्रांतिकारी सर्वहारा नेतृत्वकारी शक्तियां -- देश भर में फैले क्रांतिकारी कम्युनिस्ट ग्रुप और संगठन काम करने के ढीले-ढाले एक हद तक सामाजिक जनवादी मार्का आत्मविनाशी तौर-तरीकों को छोड़कर खुद को बोल्शेविक सांगठनिक उसूलों पर पुनर्संगठित करें और सही क्रांतिकारी-वैज्ञानिक कार्यशैली पर अमल करते हुए क्रांतिकारी जनदिशा को लागू करें। बुद्धिजीवियों और छात्रों-युवाओं के बीच से क्रांतिकारी भरती के लिए राजनीतिक कार्य के साथ-साथ आज मेहनतकश वर्गों के बीच क्रांतिकारी राजनीतिक प्रचार और एजिटेशन की कार्रवाई को सघन एवं तेज कर देना बेहद जरूरी है। मज़दूरों के बीच वर्चस्व जमाये प्रतिक्रियावादी और संशोधनवादी ट्रेड यूनियनों में क्रांतिकारी मज़दूरों के कोर ग्रुप या सेल बनाकर काम करना और आर्थिक मांगों और राजनीतिक अधिकारों के हर संघर्ष में भाग लेना ज़रूरी है। गांव के गरीबों और असंगठित मज़दूरों के बीच भी क्रांतिकारी प्रचार और संगठन के कार्य को नये सिरे से संगठित करने की आवश्यकता है।

जनदिशा पर अपनी सांगठनिक शक्ति के हिसाब से अमल करने, जनता को संगठित करने और अपनी कोशिशों के नतीजों की जांच-पड़ताल करने के दौरान ही विभिन्न क्रांतिकारी संगठन यह जान-समझ सकते हैं कि भारतीय सर्वहारा क्रांति की प्रकृति प्रोग्राम और राह के बारे में उनकी समझदारी कितनी सही या गलत है। सिर्फ इसी प्रक्रिया में वे नई क्रांतिकारी भरती कर सकेंगे और फौलादी चरित्र वाला, क्रांतिकारी सर्वहारा संगठन खड़ा कर सकेंगे।

लेकिन इतना ही कतई काफी नहीं है। संकीर्णता और अलगाव की प्रवृत्ति त्यागकर क्रांतिकारी सर्वहारा ग्रुपों-संगठनों को आपस में संवाद करने की और विभिन्न मसलों पर संयुक्त कार्रवाई की स्थितियां तैयार करने की ज़रूरत है। यह सोचना भी विज्ञान-विरोधी लगता है कि विचारधारा और भारतीय क्रांति के कार्यक्रम के बारे में कम्युनिस्ट क्रांतिकारी शिविर में गत तीस वर्षों से बुनियादी तौर पर सही सोच मौजूद रही है और महज व्यावहारिक-रणकौशलगत कारणों से टूट-फूट-बिखराव का सिलसिला लगातार जारी रहा है। हमारी अपनी सोच है कि क्रांतिकारियों के बिखराव के कारण बुनियादी हैं और इन सभी बुनियादी मुद्दों पर आज खुलकर राजनीतिक बहस की भी जरूरत है ताकि सभी क्रांतिकारी ग्रुपों को एक अखिल भारतीय क्रांतिकारी कम्युनिस्ट पार्टी के झण्डे तले एकजुट किया जा सके।

VII. पूंजीवादी संसदीय चुनावों के बारे में हमारा रुख और दृष्टिकोण क्या होना चाहिए?

पूंजीवादी व्यवस्था-विरोधी क्रांतिकारी राजनीतिक प्रचार और भण्डाफोड़ की कार्रवाई लगातार चलाते हुए क्रांतिकारी शक्तियों को संसद और विधानसभा चुनावों के दौर का विशेष तौर पर जमकर इस्तेमाल करना चाहिए और इस दौरान खासतौर पर पूंजीवादी संसदीय जनवाद की असलियत को उजागर करने का काम करना चाहिए तथा जनता को इतिहास की निरपवाद सच्चाई से परिचित कराना चाहिए कि साम्राज्यवादी और देशी लुटेरे पूंजीपतियों से सत्ता कभी भी संसदीय मार्ग से और शांतिपूर्वक नहीं छीनी जा सकती। यह केवल क्रांति के द्वारा ही संभव है। यही अबतक की सभी क्रांतियों की शिक्षा है।

मज़दूर वर्ग की सच्ची क्रांतिकारी पार्टी (या संगठन) की यह दृढ़ धारणा होती है कि चुनावी मार्ग से सर्वहारा वर्ग का शासन कदापि नहीं आ सकता, पर दूसरी ओर वह पूंजीवादी चुनावों में भाग लेने-न लेने के प्रश्न को बुनियादी सिद्धान्त का नहीं रणकौशल का सवाल मानती है। हर हाल में चुनाव-बहिष्कार -- यह नारा अतिवामपंथी है। दूसरी तरफ अथकचरे सुधारवादियों और संशोधनवादी गद्दारों की तरह "सुलह-समझौते से पार्लियामेण्ट में सीटें हासिल कर लेने" (- लेनिन) और किश्तों में सुधार के जरिए "समाजवाद" लाने का मुगालता पाल लेने या फरेब रचने के भी सच्चे सर्वहारा क्रांतिकारी सख़्त खिलाफ होते हैं। लेनिन के शब्दों में,

> "(पार्लियामेण्ट की) सीटें केवल इसलिए और केवल उसी हद तक कि आम जनता की राजनीतिक चेतना का विकास करने, उसे उच्चतर राजनीतिक स्तर पर उठाने, तथा उसे संगठित करने में वे सहायक होती हैं। ऐसा हम अथकचरे सुख की प्राप्ति के लिए नहीं, "शांति", "व्यवस्था" तथा "शांतिपूर्ण" (पूंजीवादी) "परमानन्द" की प्राप्ति के लिए नहीं, बल्कि संघर्ष के लिए, श्रम को समस्त शोषण तथा समस्त उत्पीड़न से पूर्ण मुक्ति दिलाने के संघर्ष के लिए करना चाहते हैं। केवल इसी उद्देश्य के लिए और केवल उसी हद तक जिस हद तक इस काम में वे मददगार होती हैं, पार्लियामेण्ट की सीटें, तथा सारा का सारा चुनाव आन्दोलन हमारे लिए कोई महत्व नहीं रखता है। मज़दूरों की पार्टी की समस्त आशाओं का आधार आम जनता है : वह जनता जो भयभीत नहीं है, निष्क्रिय रूप से आज्ञाकारी नहीं है, और जो चुपचाप विनीत-भाव से जुए को धारण नहीं किये रहती, बल्कि जो राजनीतिक रूप से सचेत है, अपनी मांगों के लिए खड़ी होने वाली तथा जुझारू है। काले यमदूतों के ख़तरों का हौआ दिखाकर अधकचरे लोगों को डराने के आम उदारपंथी तरीकों को, मज़दूरों की पार्टी को तिरस्कारपूर्वक ठुकरा देना चाहिए। सामाजिक-जनवादियों का सारा काम वास्तविक ख़तरे के सम्बंध में, संघर्ष के असली उद्देश्यों के सम्बन्ध में आम जनता को सचेत करना है, उस जनता को सचेत करना है जिसकी असली ताक़त पार्लियामेण्ट में नहीं है, जिसकी पार्लियामेण्ट के अन्दर बहसों में पूरी अभिव्यक्ति नहीं होती, और जो रूस के भविष्य के प्रश्न को पार्लियामेण्ट से बाहर तय करेगी। (लेनिन - सम्पूर्ण ग्रंथावली, पृ. 11, पृ.414-18)

पर भारत की परिस्थितियां आज क्या हैं? क्रांतिकारी कम्युनिस्ट ग्रुप आज इस कदर बिखरे हुए हैं और इनकी शक्ति इतनी कम है कि वे संसद-विधानसभा चुनावों में भाग लेकर क्रांतिकारी प्रचार के लिए उनका इस्तेमाल कर पाने की स्थिति में नहीं हैं। सिर्फ वे चुनावों के दौरान पूंजीवादी संसदीय राजनीति विरोधी-प्रचार के अभियान मात्र संगठित कर सकते हैं। लेकिन यह अफसोस की बात है। इस दिशा में भी गंभीरतापूर्वक सोचा जाना चाहिए कि भारतीय क्रांति के कार्यक्रम पर मतभेद के बावजूद भारतीय पूंजीवादी जनवाद और संसदीय राजनीति के खिलाफ क्रान्तिकारी प्रचार के लिए किसी साझा कार्यक्रम पर एकजुट होकर सभी क्रांतिकारी ग्रुप क्या चुनावों में भाग लेकर इनका इस्तेमाल कर सकते हैं? क्या यह उपयोगी और व्यावहारिक है? इसपर खुले दिमाग से बहस की दरकार है। हालांकि यह भी सच है कि यह भी तभी संभव और प्रभावी हो सकता है जब ऐसे क्रांतिकारी संगठन वास्तव में क्रांतिकारी जनदिशा को लागू करते हुए मज़दूरों और अन्य मेहनतकश वर्गों के बीच लगातार काम कर रहे हों और उनके बीच उनका पर्याप्त व्यापक जनाधार हो। ऐसा न हो तो पूंजीवादी संसदीय चुनावों में भागीदारी का इस्तेमाल क्रांति के लिए जनता को तैयार करने के लिए कतई नहीं किया जा सकता।

और आज की स्थिति यही है। लेकिन एक राष्ट्रव्यापी संकट के विस्फोट की पूर्वबिला में यदि सर्वहारा वर्ग के अग्रदल के फौजी इस स्थिति के बारे में गंभीरता से सोचेंगे तो इसे बदल भी सकते हैं।

मौजूदा उ.प्र. विधान सभा चुनाव और विगत लोक सभा चुनाव के बीच का समूचा राजनीतिक परिदृश्य संसदीय राजनीति और पूरी पूंजीवादी व्यवस्था के जिन गंभीर संकटों की ओर इशारा कर रहा है, उनपर गंभीरता से सोचने के लिए हम सभी क्रांतिकारियों और जागरूक मेहनतकशों से अपील करते हैं। ●

कुछ साथियों को कठिनाइयों के बारे में सोचना पसन्द नहीं है। लेकिन कठिनाइयां भी तथ्य होती हैं। हमें कठिनाइयों को मानना चाहिए, उनका विश्लेषण करना चाहिए और उनके खिलाफ संघर्ष करना चाहिए। दुनिया में सीधे रास्ते कहीं नहीं है, हमें टेढ़े-मेढ़े रास्ते तय करने के लिए हमेशा तैयार रहना चाहिए तथा युक्त में कामयाबी हासिल करने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। यह नहीं सोचना चाहिए कि एक दिन तमाम प्रतिक्रियावादी अपने आप घुटने टेक देंगे। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि हमारा भविष्य तो उज्जवल है लेकिन हमारा रास्ता टेढ़ा-मेढ़ा है।

-- माओ त्से-तुङ

दस्तावेज

कम्युनिस्ट पार्टी का संगठन और उसका ढांचा

(1921 में कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की तीसरी कांग्रेस द्वारा स्वीकृत "कम्युनिस्ट पार्टियों के संगठन पर प्रस्ताव") (दूसरी किश्त)

•व्ला०इ०लेनिन

पेरिस कम्यून से लेकर अबतक के वर्ग-संघर्षों के इतिहास की सबसे बुनियादी शिक्षाओं में से एक यह है कि अपनी एक सच्ची क्रांतिकारी पार्टी - एक कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व के बिना सर्वहारा वर्ग पूंजीपति वर्ग के विरुद्ध अपनी लड़ाई को फैसलाकुन जीत की मंजिल तक कदापि नहीं पहुंचा सकता और समाजवाद की स्थापना कदापि नहीं कर सकता।

लेनिन ने पहली बार, समग्र रूप में एक क्रांतिकारी सर्वहारा पार्टी के निर्माण एवं गठन तथा स्वरूप एवं प्रकृति से संबंधित सिद्धान्त प्रतिपादित किये। मेंशेविकों और काउत्स्की से लेकर ख्रुश्चेव तक और आज के सी०पी०आई०, सी०पी०एम० तथा सी०पी०आई०(एम०-एल०) (लिबरेशन) जैसे संशोधनवादियों तक - सभी नकली कम्युनिस्ट जो क्रांति के लक्ष्य के साथ विश्वासघात करके महज पूंजीवादी चुनावी राजनीति और अर्थवाद के दलदल में धंस गये, कम्युनिस्ट पार्टी के सांगठनिक सिद्धान्तों को तोड़-मरोड़कर पेश करते हैं या भुला देते हैं। क्रांति से विमुख हो चुके लोगों को भला एक क्रांतिकारी पार्टी की क्या जरूरत? उन्हें लेनिन, स्तालिन और माओ की पार्टियों जैसी पार्टी की नहीं, चवनिया मेंबरी वाली, महज खुली चुनावी पार्टियों की जरूरत होती है। उन्हें मजदूरों की आर्थिक मांगों और राजनीतिक अधिकारों की मांगों के लिए नहीं बल्कि महज ट्रेडयूनियनवाद के लिए ट्रेडयूनियनों की दुकानों की ज़रूरत होती है।

चिन्ता की बात यह है कि देश के विभिन्न हिस्सों में काम करने वाले बहुतेरे क्रांतिकारी कम्युनिस्ट ग्रुप भी आज सांगठनिक सिद्धान्तों और व्यवहार के मामले में बेहद ढिलाई बरत रहे हैं। बोल्शेविक सांगठनिक ढांचा खड़ा करने के बारे में वे गंभीर नहीं दीखते और ढीला-ढाला सामाजिक जनवादी आचरण कर रहे हैं।

एक सही-सच्ची कम्युनिस्ट पार्टी के पुनर्गठन के लिए सांगठनिक उसूलों पर अडिग रहना बुनियादी विचारधारात्मक महत्व का मुद्दा है। एक सही क्रांतिकारी सांगठनिक ढांचे के बगैर कोई पार्टी सही कार्यक्रम होने पर भी क्रांति को आगे नहीं बढ़ा सकती। आज ज़रूरत है कि वर्ग-सचेत सर्वहारा वर्ग को और कम्युनिस्ट कतारों को बोल्शेविक सांगठनिक उसूलों से एक बार फिर परिचित कराया जाये।

इस उद्देश्य से हम 'बिगुल' में विश्व सर्वहारा आन्दोलन का यह बहुमूल्य दस्तावेज किश्तों में प्रकाशित कर रहे हैं। कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की तीसरी कांग्रेस द्वारा पारित इस दस्तावेज का मसविदा स्वयं लेनिन ने तैयार किया था। इन आम सिद्धान्तों की लोकप्रिय व्याख्या बाद में स्तालिन ने भी अपनी पुस्तक 'लेनिनवाद के मूल सिद्धान्त' में की।

— सम्पादक

II. जनवादी केन्द्रीयता के बारे में

वर्ग संघर्ष के लिए पार्टी में जनवाद और केन्द्रीयता का वास्तविक मेल ज़रूरी

6- कम्युनिस्ट पार्टी के संगठन में जनवादी केन्द्रीकरण का एकमात्र मतलब है -- सर्वहारा जनवाद और केन्द्रीयता का वास्तविक मेल, इन दोनों का एक-दूसरे के साथ मिला होना। इस प्रकार का सम्मिलन, सिर्फ पार्टी के समूचे संगठन द्वारा लगातार सामान्य कार्रवाइयों के आधार पर, निरंतर सामान्य संघर्षों के आधार पर ही संभव हो सकता है। कम्युनिस्ट पार्टी संगठन में केन्द्रीकरण का मतलब रस्मी और मशीनी केन्द्रीकरण नहीं होता, बल्कि वह कम्युनिस्ट कार्रवाईयों का केन्द्रीकरण होता है, यानी इसका मतलब एक ऐसे नेतृत्व का निर्माण होता है जो युद्ध के लिए तैयार हो और साथ-साथ अपने को हर परिस्थिति के अनुकूल ढालने की क्षमता रखता हो। औपचारिक या यांत्रिक केन्द्रीकरण एक ऐसी औद्योगिक नौकरशाही के हाथों में "सत्ता" का केन्द्रीकरण होता है जो बाकी सदस्यों और संगठन के बाहर के क्रांतिकारी सर्वहारा जनसमुदाय पर हावी होती है। सिर्फ कम्युनिज्म के दुश्मन ही यह कह सकते हैं कि सर्वहारा वर्ग-संघर्ष का संचालन करती हुई और कम्युनिस्ट नेतृत्व को केन्द्रीकृत करती हुई कम्युनिस्ट पार्टी सर्वहारावर्ग पर शासन करने की कोशिश कर रही है। ऐसा दावा करना एक झूठ है। पार्टी के भीतर सत्ता के लिए होड़ या प्रभुत्व के लिए टकराव कम्युनिस्ट इण्टरनेशनल द्वारा स्वीकृत जनवादी केन्द्रीयता के बुनियादी सिद्धान्तों से बिलकुल मेल नहीं खाता।

नौकरशाही और औपचारिक जनवाद —दोनों नहीं

पुराने, गैर क्रांतिकारी मज़दूर आंदोलन के संगठन में एक उसी किस्म की सर्वव्यापी द्विविधता (या द्वैतवाद) विकसित हो गयी है जैसी कि बुर्जुआ राज्य में; यानी कि नौकरशाही और "जनता" के बीच की द्विविधता। पूंजीवादी माहौल के सुविचारित प्रभाव के अंतर्गत, कामों का एक खास किस्म का बंटवारा विकसित हो गया है, साझा उद्यमों के जीवंत सहमेल की जगह एक बांझ किस्म के औपचारिक जनवाद ने ले ली है और संगठन एक ओर सक्रिय पदाधिकारियों और दूसरी ओर निष्क्रिय जनता में बंट गया है। क्रांतिकारी मज़दूर आंदोलन ने भी पूंजीवादी माहौल से कुछ हद तक द्विविधता की इस रुझान को अनिवार्य रूप से विरासत में हासिल कर लिया है।

व्यवस्थित ढंग से और लगातार जमकर किये गये राजनीतिक और सांगठनिक कार्य के जरिए और लगातार सुधार और परिष्कार के द्वारा कम्युनिस्ट पार्टी को बुनियादी तौर से इस विरोध को समाप्त कर देना चाहिए।

7. एक समाजवादी जन पार्टी को एक कम्युनिस्ट पार्टी में बदलते समय, पार्टी को पुरानी व्यवस्था को अपरिवर्तित छोड़कर अपने को केन्द्रीय नेतृत्व के हाथों में प्राधिकार (अथॉरिटी) के संकेन्द्रण मात्र तक ही सीमित नहीं रखना चाहिए। केन्द्रीकरण महज कागजों पर ही नहीं मौजूद रहना चाहिए, बल्कि वास्तव में अमल में आना चाहिए और यह केवल तभी संभव हो सकता है जबकि आम सदस्य यह महसूस करें कि यह केन्द्रीय 'अथॉरिटी' उनकी आम कार्रवाईयों और संघर्षों का एक मूलभूत रूप से प्रभावी उपकरण है। अन्यथा, यह जनता को पार्टी के भीतर नौकरशाही के रूप में दिखाई देगी और इसलिए, हर प्रकार के केन्द्रीकरण, हर प्रकार के नेतृत्व और सभी अनुवर्ती अनुशासन के विरोध को बल प्रदान करेगी, नौकरशाही के विपरीत ध्रुव पर अराजकता को बल प्रदान करेगी।

संगठन में महज औपचारिक जनवाद न तो नौकरशाही और न ही अराजकता की प्रवृत्ति को दूर कर सकता है, बल्कि इसके विपरीत इन प्रवृत्तियों के लिए यही औपचारिक जनवाद उपजाऊ जमीन का काम करता है। इसलिए, एक मजबूत नेतृत्व तैयार करने के उद्देश्य में संगठन का केन्द्रीकरण तबतक सफल नहीं हो सकता, जबतक कि उसे औपचारिक जनवाद के आधार पर हासिल करने की कोशिश की जायेगी। पार्टी के भीतर, उसके निर्देशक निकायों (यानी नेतृत्वकारी कमेटियों - सं.) और सदस्यों के बीच तथा पार्टी और पार्टी के बाहर के सर्वहारा जनसमुदाय के बीच जीवंत साहचर्य और आपसी संबंधो को विकसित करना और बनाये रखना इसकी आवश्यक पूर्वशर्त है।

(अगले अंकों में जारी)

नारी सभा

रूस और पूर्वी यूरोप के मुक्त बाजार का ''स्वर्ग''

वहां सब कुछ मंहगा है, पर काफी सस्ता है औरत का श्रम और शरीर

भूतपूर्व सोवियत संघ के घटक देशों और पूर्वी यूरोप में पश्चिमी पूंजी के अश्वमेघ के घोड़े ने गत पांच वर्षों के भीतर वहां की जनता के सपनों और आकांक्षाओं को रौंद डाला है। उदारीकरण की आंधी में सभी उम्मीदें उड़ चुकी है। बेहिसाब मंहगाई, बेराजगारी, तेजी से बढ़ती असमानता, अपराध, वेश्यालय, ब्लू फिल्में, अश्लील पत्रिकाएं, माफिया गिरोह, आत्महत्याएं -- यही मुक्त बाजार की वह ''सिद्धावस्था'' है जहां पहुँचकर रूस और पूर्वी यरोप की जनता पश्चिमी जनतंत्र के प्रतिदर्श का दर्शन कर रही है। सट्टेबाजी, कालाबाजारी और दुकानों में ठुंसी पड़ी मंहगी उपभोक्ता सामग्रियों को बाहर से निहारते लोग।

पश्चिमी पूंजी के इस नये चरागाह में सबसे बुरी स्थिति वहां के आम घरों की स्त्रियों की है। मज़दूर औरतें और निम्नमध्यवर्गीय औरतें हालात की सबसे कठिन मार झेल रही हैं। शिकागो (अमेरिका) से प्रकाशित अखबार ''रिवोल्युश्नरी वर्कर'' में प्रकाशित (12 नवम्बर 1995) एक रिपोर्ट के अनुसार, रूस की बेरोजगार आबादी में से 75 प्रतिशत हिस्सा स्त्रियों का है। जीवन की न्यूनतम सुविधाएं तक जुटा पाने में असफल गरीब परिवारों की स्त्रियां दुनिया के सबसे पुराने पेशे के पंककुण्ड में धंसती जा रही हैं। रूस, पूर्वी जर्मनी, उक्रेन, पोलैण्ड और चेक गणराज्य की स्त्रियां हज़ारों की तादाद में पश्चिमी देशों में आकर वेश्यावृत्ति कर रही हैं। ''पत्नियों'' या वेश्याओं के रूप में रूसी स्त्रियों की उपलब्धता (यानी बिक्री) के विज्ञापन तमाम अग्रणी और प्रतिष्ठित अमेरिकी पत्र-पत्रिकाओं तक में प्रकाशित होते रहते हैं। रूसी स्त्रियों को दलालों के सिण्डिकेटों के जरिए अवैध ढंग से बड़े पैमाने पर जर्मनी और फ्रांस ले जाया जाता है जहां वे वेश्यावृत्ति के धंधे में लगा दी जाती हैं। ब्रुसेल्स और बर्लिन जैसे शहरों के चर्चित 'सेक्स शोज' में अब आधी से अधिक पूर्वी यूरोपीय स्त्रियां काम करती हैं क्योंकि उन्हें पश्चिमी यूरोपीय स्त्रियों के मुकाबले पांचवे हिस्से की धनराशि का वेतन देकर काम कराया जा सकता है।

रूसी अर्थव्यवस्था के संकट, विशेषकर रूबल के अवमूल्यन ने वहां की स्त्रियों को पश्चिमी मुद्राओं की प्राप्ति के लिए शरीर बेंचने और बाकायदा ट्रेनिंग लेकर अश्लील नृत्यों और प्रदर्शनों के लिए बाध्य किया है। रूस और पूर्वी यूरोप के फुटपाथों पर घटिया अश्लील पत्रिकाओं की बाढ़ आ गई है जिनमें नग्न चित्र प्रकाशित होते हैं। सस्ते पेशेवर माडलों के अतिरिक्त छात्राएं और गृहणियां भी ऐसे चित्र, अपनी जरूरतें पूरी करने के लिए नाममात्र के डॉलर, पौण्ड, फ्रैंक या मार्क लेकर खिंचवा लेती हैं। विदेशी छात्रों और पर्यटकों को वहां बहुत सस्ती दरों पर अपनी शारीरिक भूख और सनक मिटाने के लिए औरत का गोश्त मिल जाता है। यूरोप और अमेरिका में आज बाकायदे ऐसी एजेंसियां काम कर रहीं हैं जो रूस और पूर्वी यूरोप के देशों में सेक्स-पर्यटन का धंधा कर रही हैं। अमेरिका-यूरोप की पत्रिकाओं और पर्यटक-गाइडों में इन दिनों रूस और पूर्वी यूरोप के सस्ते वेश्यालयों, ''स्ट्रिप ज्वायंट्स'' (नग्न प्रदर्शन केन्द्रों), क्लबों, बारों और जुआघरों के विज्ञापन प्रायः छपते रहते हैं। पर रूसी लड़कियां किसी तरह से पश्चिम भागने की फिराक में रहती हैं ताकि वहां अपने श्रम और शरीर की बेहतर कीमत पा सकें। नौकरानी के रूप में काम करके भी वे रूस में उच्च मध्यवर्गीय आय के बराबर कमाई कर लेती हैं, हांलाकि उन्हें यौन-उत्पीड़न का भी शिकार होना पड़ता है। बर्लिन में एक रात की 'स्ट्रिपिंग' (नग्न प्रदर्शन) का मेहनताना रूस में एक स्त्री के औसत मासिक वेतन से दस गुना अधिक है। रूस में युवा लड़कियों को 'निर्यात करने' के उद्देश्य से उन्हें प्रशिक्षण देने के लिए ढेर सारे 'स्ट्रिप स्कूल' खुल गये हैं।

मास्को के एक ऐसे ही 'स्ट्रिप स्कूल' के मालिक का कहना है, ''मामला ठीक है। वर्तमान सरकार से हमारे रिश्ते बहुत अच्छे हैं।'' दुबई जैसे खाड़ी देशों के हवाईअड्डों पर रूसी लड़कियों और उन्हें लाने वाले एजेण्टों की भीड़ प्रायः नजर आती हैं, जो दो सप्ताह का 'वर्क-वीजा' लेकर आते हैं। काहिरा की भी यही स्थिति है जहां इन दिनों 'बेली डांस' के धंधे में रूसी लड़कियों ने मध्यपूर्व की लड़कियों को पीछे छोड़ दिया है।

'टाइम' 21 जून, 1993 में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार, इस्रायल में रूसी यहूदी आप्रवासियों के लगातार आने के बाद वेश्यालयों में रूसी लड़कियों की भरमार हो गई है और अकेले तेल अबीब में वेश्यालयों की संख्या गत पांच वर्षों में 30 से बढ़कर 150 हो गई है। तुर्की के उत्तरी काला सागर के किनारे स्थित 'सेक्स सैरगाहों' (सेक्स रिसार्ट्स) में रूसी नवजात गिरोहों द्वारा प्रायः रूसी 'नताशाओं' की परेडें कराई जाती रहती हैं।

उधर देङ सियाओ पिङ के ''बाजार-समाजवाद'' की स्थिति भी येल्तसिन और उनके पूर्वी यूरोपीय समानधर्माओं के ''बाजार स्वर्ग'' से कुछ बेहतर नहीं है। अमेरिका के दोनों सागर तटों पर बड़े पैमाने पर चीन से ऐसी स्त्रियां आती रहती हैं जो गरीबी की मार से त्रस्त होकर रोजी-रोटी की तलाश में देश छोड़कर भाग आती हैं। उन्हें लाने वाले एजेण्ट ही उनका भाड़ा उधार के तौर पर देते हैं जिसे चुकाने के लिए वे वेश्यावृत्ति करने के लिए बाध्य हो जाती हैं। ह्यूस्टन, डिट्रॉयट और टेक्सास के वेश्यालयों में अब चीनी लड़कियों की संख्या बढ़ती जा रही है। चीनी सत्ता भी आज इस तथ्य को स्वीकार करती है कि चीन में गत पन्द्रह वर्षों के दौरान वेश्यावृत्ति, यौन रोगों और नारी-विरोधी अपराध तेजी से बढ़े हैं, जबकि 1976 तक वहां इनका नामोनिशान तक नही था। चीन में भी बढ़ते बेरोजगारों में स्त्रियों की संख्या अधिक है और उनका श्रम भी पुरुषों के मुकाबले तीस प्रतिशत अधिक सस्ता है।

इन सभी भूतपूर्व समाजवादी देशों में मजदूरों के लिए बाजार की स्वतंत्रता का एकमात्र अर्थ है -- अपना श्रम मिट्टी के मोल बेचने की स्वतंत्रता। स्त्रियों के लिए इसका मतलब है, सस्ती दरों पर अपना श्रम और शरीर बेचने की स्वतंत्रता। मुक्त बाजार का दर्शन निरपवाद रूप से हर चीज को माल में बदल देने का दर्शन है। रूस, पूर्वी यूरोप और चीन में बाजार का दर्शन स्त्री समुदाय के लिए श्रम की लूट और नारकीय यौन-उत्पीड़न लेकर आया है। वहां की स्त्रियों के लिए मुक्त बाजार व्यवस्था का एकमात्र अर्थ है -- श्रम की लूट, पुरुष-स्वामित्ववाद और यौन-गुलामी की वापसी। पूंजीवाद का नवक्लासिकी पश्चिमी संस्करण उन्हें इसके अतिरिक्त भला और क्या दे सकता था?

● कात्यायनी

(प्रांजल फीचर सेवा)

निजीकरण के साथ ही मजदूरों की पगार और सुविधाएं घटती गई है

खुद सरकारी रिपोर्टों ने मनमोहन-चिदम्बरम के दावों की पोल खोली

भूतपूर्व वित्त मंत्री मनमोहन सिंह बार-बार यह दावा करते रहते थे और वर्तमान मंत्री चिदंबरम भी लगातार वही राग अलापते रहे हैं कि उद्योगों के निजीकरण से उत्पादन में जो बढ़ोत्तरी होगी और जो प्रतियोगिता बढ़ेगी, उसके चलते काम करने वाले मज़दूरों को भी बेहतर वेतन और बेहतर सेवा शर्तें हासिल हो जायेंगी। पर अब खुद सरकारी रिपोर्टें भी उनके झूठे दावों की पोल खोल रही हैं।

उद्योगों में निजी क्षेत्र की बढ़ती भागीदारी ने मज़दूरों की भारी आबादी को बेकार करने और रोजगार के अवसरों को घटाने के साथ ही कार्यरत मज़दूरों को पहले हासिल होने वाली मज़दूरी और सुविधाओं में भी कटौती कर डाली है।

'औद्योगिक क्षेत्र में जीवन ढांचे पर निजीकरण का असर' नामक अध्ययन रिर्पोट इस सच्चाई को उजागर करती है जिसे प्रख्यात अर्थशास्त्री और भारतीय सांख्यिकी सेवा के पूर्व सदस्य डा० के. सी. तनेजा ने प्रस्तुत की है। डा. तनेजा की यह अध्ययन रिपोर्ट केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन द्वारा जारी 'वार्षिक उद्योग सर्वेक्षण रिपोर्ट 1992-93' पर और विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित सर्वेक्षणों पर आधारित है।

उक्त अध्ययन रिपोर्ट के मुताबिक 1970 के पहले स्थापित उद्योगों में मज़दूर औसतन 32 हज़ार 46 रुपये सालाना वेतन पाते हैं जबकि 1970 से 1993 के बीच स्थापित उद्योगों में मज़दूरों को सिर्फ 19 हज़ार 330 रुपये सालाना वेतन मिलता है। उल्लेखनीय है कि डा. तनेजा ने ही 1965 में पहली बार औद्योगिक विकास को मापने का तरीका विकसित किया था जिसका इस्तेमाल आज सभी राज्यों द्वारा किया जा रहा है।

डा. तनेजा की अध्ययन रिपोर्ट के अनुसार, 1980 से 1993 के दौरान गठित उद्योगों के मज़दूरों को 1970 के पहले गठित उद्योगों के मज़दूरों की तुलना में सिर्फ 52 प्रतिशत वेतन मिलता है। वर्ष 1992-93 के उदाहरण से पता चलता है कि निजी क्षेत्र के मज़दूरों की मज़दूरी की स्थिति सार्वजनिक क्षेत्र की अपेक्षा काफी खराब है। निजी क्षेत्र के मज़दूर का इस वर्ष सार्वजनिक इकाईयों के श्रमिक के 35,444 रुपये की तुलना में सिर्फ 20,712 रुपये ही मिले। यह सार्वजनिक क्षेत्र के मज़दूरों को मिलने वाली रकम का महज 58.44 प्रतिशत ही है।

1970 के पहले स्थापित उद्योगों में प्रत्येक 100 रुपये के योगदान पर मज़दूर को औसतन 38 रुपये 45 पैसे मिलते हैं। 1980 से 1993 के बीच स्थापित उद्योगों में यह औसत सबसे कम -- 21 रुपये चार पैसे का है।

अध्ययन में स्पष्ट किया गया है कि मज़दूरों को उत्पादन में उनके योगदान का जो हिस्सा पगार के रूप में पहले मिलता था, अब पूंजीपतियों ने उसे घटाकर काफी कम कर दिया है जबकि हर हाल में वे यह सुनिश्चित कर रहे हैं कि पूंजी निवेश पर उनके मुनाफे की दर लगातार बढ़ती रहे। वर्ष 1970 से 1979 के बीच स्थापित उद्योगों में निवेश पर लाभदर की उच्चतम सीमा 42.28 प्रतिशत थी। वर्ष 1993 में निजी क्षेत्र में निवेश पर लाभ की दर 43.47 प्रतिशत थी। उस वर्ष सार्वजनिक क्षेत्र में यह दर सिर्फ 15.96 प्रतिशत थी।

लाभ की दर की इसी कमी को दिखाकर निजीकरण और उदारीकरण की नीतियों के पैरोकार इन नीतियों को सही ठहराते हैं। पर उपरोक्त चर्चा से यह स्पष्ट है कि निजी क्षेत्र में हर कीमत पर निवेश पर लाभ की दर में लगातार बढ़ोत्तरी मज़दूरों को ज्यादा से ज्यादा निचोड़कर और कंगाल बनाकर हासिल की जा रही है। सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों में पूंजी लगाने की जगह उनमें पहले से लगी पूंजी को भी निकाला जा रहा है। इन उद्योगों में मशीनों का आधुनिकीकरण नहीं किया जाता। राष्ट्रीकृत बैंक भी इन उद्योगों के बजाय निजी क्षेत्र को पूंजी मुहैया कराने को अधिक प्राथमिकता देते हैं। सरकार एक ओर तो निजी पूंजीपतियों द्वारा जानबूझकर, पूंजी निकालकर, बीमार बनाई गई मिलों का अधिग्रहण करके जनता के पैसे से उनकी सेहत ठीक करती है और फिर उन्हें निजी में दे देती है, दूसरी ओर सार्वजनिक क्षेत्र के स्थापित उद्योगों में थोड़ी - बहुत नई पूंजी लगाकर आधुनिकीकरण तो दूर रख-रखाव तक नहीं किया जाता और फिर उन्हें घाटे में दिखाकर इतने कम पैसे में पूंजीपतियों को दे दिया ज़ाता है, जितने से अधिक कीमत सिर्फ उन कारखानों की भूमि की होती है।

हमारा मतलब यहां सार्वजनिक क्षेत्र की पैरोकारी करना नहीं है। यह एक तथ्य है कि नौकरशाही के भारी बोझ, भ्रष्टाचार और पूंजीवादी प्रतियोगिता की प्रेरक शक्ति के भारी अभाव के कारण सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योग निजी क्षेत्र के उद्योगों से पीछे छूटने लगते हैं। राजकीय इजारेदार पूंजीवाद (सार्वजनिक क्षेत्र) पूंजीवादी उत्पादन में बढ़ती इजारेदारी की ही एक मंजिल में पैदा हुआ। और भारत जैसे देशों में समाजवाद के नाम पर सार्वजनिक क्षेत्र के विकास ने जनता से पैसे निचोड़कर पूंजीवादी विकास के लिए आवश्यक पूंजी जुटाने में योगदान किया। अब इसकी यह भूमिका खतम हो चुकी है और देशी पूंजीवाद (और साम्राज्यवाद) की इस दौर की ज़रूरतों के हिसाब से निजी इजारेदार पूंजी के विकास पर सरकार का जोर अधिक है।

यहां समझने की बात सिर्फ यह है कि पूंजीवादी विकास का यह नया दौर नग्न-निर्मम पूंजीवादी शोषण और लूट मार का दौर होगा। सार्वजनिक क्षेत्र के बड़े उद्योगों में संगठित मज़दूर वर्ग ने 1947 के पहले और उसके बाद लम्बे संघर्षों और कुर्बानियों के बाद जो हक़ और सुविधायें हासिल की थीं, उन्हें भी निजीकरण और उदारीकरण के इस नये दौर में बहुराष्ट्रीय कम्पनियां और देशी इजारेदार पूंजीपति मज़दूर वर्ग से छीन रहे हैं।

नेहरू के ''समाजवाद'' का कीर्तन गाने वाले भांति-भांति के नकली वामपंथी तोतों की तरह सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योग को समाजवादी चीज़ बताना राजकीय पूंजीवाद का गुणगान होगा। फिर यह भी बात है कि सार्वजनिक क्षेत्रों का टूटना और निजीकरण पूंजीवादी विकास के नियमों से बंधी गति का नतीजा है। यहां प्रश्न इतिहास के चक्के को पीछे घुमाने की नहीं, बल्कि गति के इन नियमों को ही बदल डालने का है। नई आर्थिक नीति, भूमंडलीकरण या आर्थिक नवउपनिवेशवाद द्वारा आम जनता पर बरपा किये जाने वाले कहर के खात्मे का एकमात्र रास्ता है -- पूंजीवाद का खात्मा। सर्वहारा वर्ग के सभी उद्यम आज इसी लक्ष्य से निर्देशित होने चाहिए -- यह इतिहास का संदेश है।

(प्रांजल फीचर सेवा)

कहानी

पारमा के बच्चे

• मक्सिम गोर्की

जिनोवा में रेलवे स्टेशन के सामने वाले छोटे-से चौक में लोगों की भारी भीड़ जमा थी। उनमें अधिकतर मजदूर थे, लेकिन बढ़िया कपड़े पहने और सम्पन्न तथा खाते-पीते लोग भी उनमें शामिल थे। नगरपालिका के सदस्य इस भीड़ में सबसे आगे थे। इनके सिरों के ऊपर रेशमी धागों से बड़े कलात्मक ढंग से कढ़ा हुआ भारी नगर-ध्वज फहरा रहा था। पास ही में मजदूर-संगठनों के रंग-बिरंगे झण्डे हिल-डुल रहे थे। झण्डों के सुनहरे झब्बे, झालरें और तनियां तथा ध्वज-डंडों के धातु से मढ़े हुए बर्छीनुमा सिरे चमचमा रहे थे, रेशम की सरसराहट सुनाई पड़ रही थी, समारोही मनःस्थिति वाली भीड़ का मंद गायन सहगान की तरह धीमे-धीमे गूंज रहा था।

एक ऊंचे चबूतरे पर कोलम्बस की मूर्ति भीड़ के ऊपर खड़ी थी, उसी कोलम्बस की मूर्ति जिसने अपने विश्वासों के लिए बहुत दुख-दर्द सहे और विजयी भी इसलिए हुआ कि उनमें विश्वास करता था। इस समय भी वह नीचे खड़े लोगों की ओर देख रहा था और अपने संगमरमर के होंटों से मानो यह कह रहा था -

"केवल विश्वास करने वाले ही विजयी होते हैं।"

बाजे बजानेवालों ने कांसे-तांबे के अपने बाजे चबूतरे के गिर्द मूर्ति के कदमों में रख दिये थे और वे धूप में सोने की तरह चमक रहे थे।

पीछे की ओर ढालू अर्धचंद्राकार स्टेशन की संगमरमर की, भारी-भरकम इमारत ऐसे अपनी भुजाएं फैलाये खड़ी थी मानो लोगों को अपनी बांहों में भर लेना चाहती हो। बन्दरगाह की ओर से भाप-चालित जहाजों की भारी फक-फक, पानी में प्रोपेलर की दबी-घुटी आवाज, जंजीरों की छनक, सीटियां और चीख-चिल्लाहट सुनाई दे रही थी। चौक में शान्ति थी, उमस थी और वह तेज धूप से तप रहा था। घरों के छज्जों और खिड़कियों में औरतें फूल लिए खड़ी थी तथा उनके पास ही पर्व-त्योहारों के अवसरों की तरह सजे-धजे और फूलों की तरह प्रतीत होने वाले बच्चे खड़े थे।

स्टेशन की ओर बढ़े आ रहे इंजन ने सीटी बजायी, भीड़ हरकत में आई, मुड़े-मुड़ाये हुए अनेक टोप काले पक्षियों की भांति हवा में उछल गये, बजवैयों ने बाज उठा लिये, कुछ गम्भीर और अधेड़ उम्र के लोग अपने को ठीक-ठाक करके आगे आये, उन्होंने लोगों की ओर मुंह किया और हाथों को दायें-बांये हिलाते-डुलाते हुए भीड़ से कुछ कहने लगे।

धीरे-धीरे और मुश्किल से हटते हुए लोगों ने सड़क पर चौड़ा रास्ता बना दिया।

"किसका स्वागत किया जा रहा है?"

"पारमा नगर के बच्चों का।"

पारमा में हड़ताल चल रही थी। मालिक लोग झुकने को तैयार नहीं थे, मजदूरों के लिए स्थिति बड़ी कठिन हो गयी थी और इसलिए उन्होंने अपने बच्चों को, जो भूख के कारण बीमार होने लगे थे, जिनोआ में अपने साथियों के पास भेज दिया था।

रेलवे स्टेशन के स्तम्भों के पीछे से बालकों का एक सुव्यवस्थित जुलूस बढ़ा आ रहा था। वे अधनंगे थे और अपने चिथड़ों में झबरीले, अजीब जानवरों की तरह झबरीले से लग रहे थे। वे पांच-पांच की कतारें बनाये और एक-दूसरे के हाथ थामे हुए चले आ रहे थे -- बहुत ही छोटे-छोटे, धूल-मिट्टी से लथपथ और शायद थके-हारे। उनके चेहरे गम्भीर थे, किन्तु आंखों में सजीवता और निर्मलता की चमक थी और जब बैंड ने गैरीबाल्डी के स्तुतिगान की धुन बजायी तो उनके दुबले-पतले, तीखे और क्षुधा-पीड़ित चेहरों पर खुशी की लहर सी दौड़ गयी, उल्लासपूर्ण मुस्कान खिल उठी।

भीड़ ने भविष्य के इन लोगों का बेहद शोर मचाते हुए स्वागत किया, उनके सम्मुख झण्डे झुका दिये गये, बच्चों की आंखों को चौंधियाते और कानों को बहरे करते हुए बाजे खूब जोरों से बज उठे। ऐसे जोरदार स्वागत से तनिक स्तम्भित होकर घड़ी भर को वे पीछे हटे, किन्तु तत्काल ही सम्भल गये, मानो लम्बे हो गये, घुल-मिलकर एक शरीर बन गये और सैकड़ों कण्ठों से, किन्तु मानों एक ही छाती से निकलती आवाज में चिल्ला उठे --

'इटली जिन्दाबाद'

"नव पारमा नगर जिन्दाबाद!" बच्चों की ओर दौड़ती हुई भीड़ ने जोरदार नारा लगाया।

'गैरीबाल्डी जिन्दाबाद" भूरे पच्चड़ की भांति भीड़ में घुसते और उसी में लुप्त होते हुए बच्चे चिल्लाये।

होटलों की खिड़कियों में और घरों की छतों पर सफ़ेद परिन्दों की तरह रुमाल हिल रहे थे, वहां से लोगों के सिरों पर फूलों की बारिश हो रही थी और ऊंची-ऊंची उल्लासपूर्ण आवाजें सुनाई दे रही थीं।

सभी कुछ समोरीही बन गया, सभी कुछ में सजीवता आ गयी, भूरे रंग का संगमरमर तक किरण-बिन्दुओं से खिल उठा।

झण्डे लहरा रहे थे, टोप-टोपियां और फूल हवा में उड़ रहे थे। वयस्कों के सिरों के ऊपर बच्चों के छोटे-छोटे सिर दिखाई देने लगे, लोगों का स्वागत करते और फूलों को लोकते हुए बच्चों के छोटे-छोटे, गंदे-मैले हाथ झलक दिखाने लगे और हवा में ये नारे लगातार ऊंचे-ऊंचे गूंज रहे थे --

'समाजवाद जिन्दाबाद'

'इटली जिन्दाबाद'

लगभग सभी बच्चों को गोद में उठा लिया गया था, वे वयस्कों के कंधों पर बैठे थे, कठोर से प्रतीत होने वाले मुच्छल लोगों की चौड़ी छातियों से चिपके हुए थे। शोर-शराबे, हंसी-ठहाकों और हो-हल्ले में बैंडबाजे की आवाज मुश्किल से सुनाई दे रही थी।

शेष रह गये बालकों को लेने के लिए नारियां भीड़ में इधर-उधर भाग रही थीं और एक-दूसरी से कुछ इस तरह के प्रश्न कर रही थीं --

"अन्नीता, तुम दो बच्चे ले रही हो न?"

"हां। आप भी?"

"लंगड़ी मार्गारीता के लिए भी एक बच्चा ले लेना.."

सभी ओर उल्लासपूर्ण और पर्व के रंग में रंगे हुए चेहरे थे, दयालु और नम आंखें थीं और कहीं-कहीं पर हड़तालियों के बच्चे रोटी भी खाने लगे थे।

"हमारे वक्तों में किसी को यह नहीं सूझा!" चोंच जैसी नाक और दांतों के बीच काला सिगार दबाये हुए एक बूढ़े ने कहा।

"और कितना सीधा-सादा उपाय है..."

"हां! सीधा-सादा और समझदारी का।"

बूढ़े ने मुंह से सिगार निकाला, उसके सिरे को गौर से देखा और आह भरकर राख झाड़ी। इसके बाद पारमा के दो बच्चों को, जो शायद भाई थे, अपने निकट देखकर ऐसी भयानक-सी सूरत बना ली मानो उन पर हमला करने को तैयार हो। बच्चे गंभीर मुद्रा बनाये उसकी तरफ देख रहे थे। इसी समय उसने टोपी आंखों पर खींच ली और हाथ फैला दिये। बच्चे माथे पर बल डालकर कुछ पीछे हटते हुए एक-दूसरे के साथ सट गये। बूढ़ा अचानक उकड़ूं बैठ गया और उसने मुर्गे से बहुत मिलती-जुलती आवाज में जोर से बांग दी। नंगे पैरों को पत्थरों पर पटकते हुए बच्चे खिलखिलाकर हंस दिये। बूढ़ा उठा, उसने अपना टोप ठीक किया और यह मानते हुए कि अपना कर्तव्य पूरा कर दिया है, लड़खड़ाते पैरों पर डोलता हुआ वहां से चल दिया।

पके बालों वाली एक कुबड़ी औरत, जो चुड़ैल बाबा-यागा जैसी लगती थी और जिसकी हड़ीली ठोड़ी पर कड़े, भूरे बाल थे, कोलम्बस की मूर्ति के पास खड़ी थी और अपनी बदरंग शाल के पल्लू से रोने के कारण लाल हुई आंखों को पोंछ रही थी। इस उत्तेजित भीड़ में यह काली-काली और बदसूरत औरत अजीब ढंग से अकेली-सी प्रतीत हो रही थी .....

जिनोआ की काले बालोंवाली एक औरत सात साल के एक बच्चे की उंगली थामे हुए थिरकती-सी चली जा रही थी। बालक खड़ाऊं और कंधों को छूता हुआ भूरे रंग का टोप पहने था। वह टोप को गुद्दी पर करने के लिए सिर को पीछे की ओर झटकता था, लेकिन वह फिर से चेहरे पर आ जाता था। औरत ने लड़के के छोटे से सिर से उसे उतारकर कुछ गाते तथा हंसते हुए हवा में लहराया, बेहद खुश लड़का सिर ऊपर की ओर करके टोप को देखता रहा, फिर उसे पकड़ने के लिए उछला और फिर ये दोनों आंखों से ओझल हो गये।

बड़ी-बड़ी नंगी भुजाओं वाला लम्बा-तड़ंगा व्यक्ति, जो चमड़े का पेशबंद बांधे था, भूरे रंग की चूहिया जैसी छः वर्षीया बालिका को कंधे पर बिठाये था। उसने आग की लपट जैसे लाल बालों वाले लड़के की उंगली थामे हुए अपने निकट जाती औरत से कहा --

"समझती हो न, अगर हमारे इस ढंग ने गहरी जड़ जमा ली तो हमें जीतना मुश्किल होगा। ठीक है न?"

इतना कहकर उसने जोरदार, ऊंचा और विजयी ठहाका लगाया और अपने हल्के से बोझ को नीली हवा में उछालकर नारा लगाया -- "पारमा जिन्दाबाद।"

बच्चों को उठाये या उनके हाथ थामे हुए लोग चले गये और चौक में रह गये कुचले-मुरझाये फूल, टॉफियों के कागज और प्रफुल्ल हमालों का दल और उनके ऊपर थी नयी दुनिया को खोजने वाले उदात्त व्यक्ति की मूर्ति।

और सड़कों पर से नवजीवन की ओर बढ़ते लोगों की प्रसन्नतापूर्ण ऊंची-ऊंची आवाजें ऐसे सुनाई दे रही थी मानो बहुत बड़े-बड़े बिगुल बज रहे हों। ●

पहिले-पहिले जब ओट मांगे अइलें...

पहिले-पहिले जब ओट मांगे अइलें तऽ बोले लगलें ना
हो कि बोले लगले ना
तोहके खेतवा दिअइबों
ओमे फसलि उगइबों
ऊ तऽ बोले लगलें ना
बजड़ा के रोटिया में देई देई नूनवा
सोचली कि अब तऽ बदली कनूनवां
पुलिस दरोगवा के पनही ना सहबों
अब ना अकारथ बहे पाई खूनवा
दूसरे चुनउवा में जब उपरइलें तऽ बोलें लगले ना
हो कि बोले लगलें ना
तोहके कुइंया खनइबों
सब पियसिया मिटइबों
ऊ तऽ बोलें लगले ना
ईहवां से उड़ि-उड़ि उहां जब गइलें
सोचली जमीनियां के बतिया भुलइलें
हमनी के धीरे से जो मनवा परवली
जोर से कनूनिया कनूनिया चिलइलें
तीसरे चुनउवा मे चेहरा दिखइलें तऽ बोले लगलें ना
हो कि बोले लगले ना
तोहके महल उठइबों
ओमे बिजुरी लगइबों
ऊ तऽ बोलें लगलें ना
चमकल बिजुरी तऽ गोसयां दुअरिया
हमरी झोपड़िया में घहरे अन्हरिया
सोचली कि अब तक जेके-जेके चुनली
हमके बनावें सब काठ के पुतरिया
अबकी टपकिहें त कहबों कि देखऽ तू बहुत कइलऽ ना
हो बहुत कइलऽ ना
तोहके अब न थकइबों
आपन हथवा उठइबों
हम तऽ इहे कहबों ना
हथवा में हमरे फसलिया भरलि बा
हथवा में हमरे लहरिया भरलि बा
एही हथवा से देश दुनिया में सगरी
लूट कऽ किलन पर बिजुरिया गिरलबा
जब हम इहवों के किलवा ढहइबों त एही हाथे ना
हो कि एही हाथे ना
तोहके मटिया मिलइबों
आपन रजवा बनइबों
हो कि एही हाथे ना

● गोरख पाण्डे

सीखो दोस्तो सीखो!

सीखो दोस्तो सीखो, सीखो दोस्तो सीखो!
बुनियाद से, बुनियाद से, बुनियाद से!
बुनियाद से शुरू करो
तुमको अगुआ है बनना।
अब भी नही है देर हुई, अगुआ तुम्हें जो है बनना।
बुनियाद से, बुनियाद से, बुनियाद से!
क ख ग घ सीखो लेकिन -- इतना है नहीं काफी।
फिर भी सीखो, जानो,
हर चीज़ को मेरे साथी।
पतवार को अपने हाथ में ले लो, हो जाओ तैयार
अगुआ तुम्हें जो है बनना।
सीखो दोस्तो सीखो!
बहिष्कृतो, तुम सीखो! ऐ बन्दी, तुम सीखो!
औरत रसोई घर की, तुम सीखो, तुम सीखो!
ऐ बाबा, तुम सीखो!
पतवार को अपने हाथ में ले लो, हो जाओ तैयार,
अगुआ तुम्हें जो है बनना!
बेघर भटकने वालों, अपना ही ग्रंथ बनाओ!
रुके हुए पानी की मछली,
ज्ञान की खोज में तुम निकलो!
ऐ भूखे, तुम अपने लिए एक किताब तलाश करो,
अस्त्र यही एक होगा, होगा यही हथियार!
पतवार को अपने हाथ में ले लो, हो जाओ तैयार!
अगुआ तुम्हें जो है बनना!
कभी न डरना दोस्तो, कोई सवाल उठाने से,
अंधविश्वासों के दम पर, कभी यकी न करना,
तुम खुद जांचकर देखो! तुम खुद जो न सीखोगे,
उसे कभी नहीं जान पाओगे!
पूछो सवाल हिसाबों से, जो तम्हें चुकाने है सारे,
हर चीज़ पर रखकर उंगली पूछो --
ये कैसे मिला, कहां से आया!
अगुआ तुम्हें जो है बनना!

● बर्तोल्त ब्रेख्त अनुवाद : राजेन्द्र मण्डल

स्कूटर्स इंडिया के मजदूरों का आंदोलन

अपनी लड़ाई को बड़ी लड़ाई की एक कड़ी के रूप में देखो!

(पेज 1 से जारी)

स्कूटर्स इंडिया की वर्तमान स्थिति और मजदूरों की तमाम लम्बित मांगो को देखते हुए यह एक बहुत ही सीमित उपलब्धि है, लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि अगर मजदूरों ने एकजुट होकर लड़ाई नहीं लड़ी होती, उन्हें बांटने और निराश करने की सारी साजिशों को नाकाम करके संघर्ष में दृढ़ नहीं रहे होते तो यह भी नहीं मिलता।

इस आंदोलन ने एक बार फिर यह साबित किया है कि निरन्तर संघर्ष करना आज मजदूर वर्ग के अस्तित्व का प्रश्न बन गया है। आज मजदूरों के हितों पर चौतरफा हमले हो रहे हैं। और अधिक अधिकरों की मांग करने की तो दूर, आज तो मजदूरों को पहले से मिले हुए अपने एक-एक अधिकार को बचाने के लिए भी जूझना पड़ रहा है। आज सीधे उनके जीने के लिए ज़रूरी बुनियादी हकों पर भी डकैती डाली जा रही है। किसी कवि की ये पंक्तियां आज की स्थिति में बिल्कुल सटीक है --

अगर हम नही लड़ते
अगर हम लड़ते नहीं जाते
तो दुश्मन
अपनी संगीनों से हमें खत्म कर डालेगा
और फिर
हमारी हड्डियों की ओर इशारा करके
कहेगा
देखो
ये गुलामों की हड्डियां है
गुलामों की।

आज किसी एक कारखाने, सेक्टर या किसी एक औद्योगिक क्षेत्र के मज़दूर अलग-अलग लड़ाई लड़कर स्कूटर्स इंडिया के मजदूरों के वर्तमान आंदोलन जितना ही, या इससे थोड़ा कम या ज्यादा हासिल कर सकते हैं। कोई भी लड़ाई अब स्थानीय पैमाने की नहीं रह गई है। पूंजी और श्रम के बीच एक नये युद्ध की रेखा आज पूरी दुनिया में खिंच चुकी है। भारत उसमें जगह-जगह चल रहे मजदूरों के संघर्ष से लेकर इंडोनेशिया में नये सिरे से संगठित होते मज़दूरों के संघर्ष, लातिनी अमेरिका के विभिन्न देशों में भड़कते मजदूर आंदोलन और फ्रांस, बेल्ज़ियम, ज़र्मनी आदि में होने वाली व्यापक मज़दूर हड़तालें जैसे इस नई जंग के अनेक मोर्चे हैं। इसका एक रूप बंगाल में कानोड़िया व विक्टोरिया जूट मिलों के मजदूरों के अनूठे संघर्ष में दिखता है तो दूसरा रूप कानपुर में बंद होती कपड़ा मिलों के मजदूरों की लड़ाई में दिखता है। देश का शायद ही कोई ऐसा शहर होगा जहां नई आर्थिक नीतियों के आने के बाद मजदूरों पर कहर बरपा न हुआ हो।

आज पूरी दुनिया में श्रम को ज़्यादा से ज़्यादा निचोड़कर पूंजी ज़्यादा से ज़्यादा मोटी हो रही है। नयी-नयी मशीने लायी जा रही हैं, नयी-नयी तकनीकें अपनाई जा रही हैं -- पर यह सब इंसानियत को कुछ देने के लिए नहीं, बल्कि मेहनत की लूट को ज़्यादा से ज़्यादा बढ़ाते रहने के लिए हो रहा है। नयी आर्थिक नीतियां लागू होने के बाद से सड़कों पर बेरोज़गार मज़दूरों की तादाद बढ़ रही है जिसका इस्तेमाल पूंजीपति अपनी 'रिजर्व आर्मी' के रूप में करते हुए मजदूरों के शोषण को तेज करते जा रहे हैं। कारखानों में अधिकाधिक संख्या में संगठित मजदूरों की छंटनी करके उनकी जगह कैजुअल तथा अस्थायी असंगठित मजदूरों से जानवरों की तरह काम कराया जा रहा है। सोनीपत, गुड़गांवा, फरीदाबाद, गाजियाबाद जैसे औद्योगिक क्षेत्रों में विदेशी पूंजी से लग रहे अत्याधुनिक उद्योगों में औरतों, बच्चों सहित असंगठित मजदूर आबादी का बर्बर शोषण किया जा रहा है। जिंदा रहने भर मजदूरी देकर उनसे 12-14 घंटे काम कराया जाता है और किसी किस्म के अधिकार नहीं दिये जाते हैं। ऐसे ही क्षेत्रों को औद्योगिक विकास के मॉडल के रूप में पेश किया जा रहा है।

इस हालात की चर्चा करके हम यह कहना चाहते हैं कि एकजुट होकर संघर्ष करना आज मजदूरों के जीने की शर्त बन गया है। न केवल मजदूर, बल्कि सभी कर्मचारियों को, जनता के सभी तबकों को संगठित और एकजुट होना होगा।

कारखाने-कारखाने में चलने वाली लड़ाई आज इस व्यवस्था को बदलकर एक नई व्यवस्था कायम करने की लड़ाई से सीधे जुड़ गई है।

तलवार अब भी लटक रही है

स्कूटर्स इंडिया के मजदूरों ने अपनी लड़ाई में एक जीत हासिल की है, पर उनके सिरों पर तलवार अब भी लटक रही है। यह तलवार आज सार्वजनिक क्षेत्र के हर कारखानें के मजदूरों के सिर पर लटक रही है। यह तलवार निजी क्षेत्र के मजदूरों के सिरों पर लटक रही है। अपने आस-पास नज़र दौड़ाए तो आपको अपनी गर्दन पर इस तलवार की चुभन महसूस होगी। लखनऊ में ही अपट्रान कम्पनी को बेचने के लिए टेण्डर निकाला जा चुका है, यू.पी. ड्रग्स एंड फार्मास्युटिकल्स व यू.पी. इंस्ट्रूमेंट्स लि. को बेचने की प्रक्रिया चल रही है विक्रम काटन मिल वर्षों से बंद पड़ी है। एवरेडी फ्लैशलाइट कारखाने में न केवल मजदूरों की तयशुदा वेतन वृद्धि वर्षों से रुकी पड़ी है, बल्कि तमाम बदमाशी भरे बहानों से हर महीने उनके 200-300 रुपये तक काट लिए जाते हैं। कानपुर, जगदीशपुर, सण्डीला आदि में बंद होती हुई फैक्ट्रि यां, छंटनी, असंगठित मजदूरों का निर्मम शोषण, हक मांग रहे मजदूरों पर पुलिस और मालिकों के गुण्डों के हमले, श्रम कानूनों का खुल्लमखुल्ला उल्लंघन ओर लेबर कोर्ट से लेकर बड़ी अदालत तक सबका स्पष्ट मजदूर-विरोधी रवैया -- सब यही कहानी कह रहे हैं। स्कूटर्स इंडिया के लिए सुधार योजनाओं का "पैकेज" घोषित करते हुए बी.आई.एफ.आर. ने जो शर्तें रखी हैं, वह भी यही बताती हैं कि खतरा टला नहीं है। इन शर्तों के मुताबिक अगले दो-तीन साल में 350 मजदूरों की छंटनी की जानी है। वेतन वृद्धि की कोई बात इस पैकेज में नहीं है और न ही कम्पनी को बाजार की कड़ी प्रतियोगिता में टिके रहने लायक बनाने की कोई योजना दी गई है। इसलिए मजदूर एक पल के लिए भी निश्चिन्त नहीं हो सकते।

हां !
वहां अब भी भेड़िये मौजूद है
हमेशा की तरह भंयकर और बर्बर
भेड़िये जो अचानक लोमड़ी बन जाते है।
इसलिए हमारे लोगों को
हमेशा की तरह चौकस रहना चाहिए।

कुछ जरूरी सबक कुछ जरूरी सवालात

स्कूटर्स इंडिया के आंदोलन का सबसे पहला और फौरी सबक यह है कि मजदूरों को लगातार अपने अधिकारों के प्रति जागरूक रहना चाहिए। उन्हें अपने अधिकारों के बारे में अच्छी तरह जानना-समझना चाहिए। ऐसा नहीं करने का कितना भयंकर नतीजा हो सकता है, इसे स्कूटर्स इंडिया के मजदूरों से ज़्यादा अच्छी तरह कौन समझ सकता है, जिनके करीब एक हजार साथियों को धोखाधड़ी करके स्वैच्छिक सेवानिवृति के नाम पर निकाल दिया गया था।

इसका सबसे महत्वपूर्ण है कि मजदूरों को एकताबद्ध होना ही होगा। बिखरा हुआ मजदूर लड़ नहीं सकता। सबसे पहले तो अपने कारखाने के स्तर पर मजदूरों को आपसी एकता कायम करनी होगी। फिर अन्य कारखानों के मजदूरों के साथ उनके संघर्षों में एकजुटता कायम करते हुए अपने शहर के स्तर पर साझा लड़ाइयों का आधार बनाना चाहिए। और धीरे-धीरे इस एकता को ज्यादा व्यापक और गहरा बनाने की दिशा में बढ़ना चाहिए। अब वक्त आ गया है कि मजदूर अपने नेताओं की आंखों में आंखें डालकर पूछें कि मजदूरों को आपस में क्यों बांट दिया गया है? एक-एक कारखाने में कई-कई यूनियनें क्यों बन गई है? यूनियन जिसका अर्थ ही होता है -- एकताबद्ध संघ -- वही आज बहुत सी जगहों पर मजदूरों को अलग-अलग बांट देने का कारण क्यों बन गया है? आज जब दुनिया भर के लुटेरे आपस में एक होकर मजदूरों को लूटने-खसोटने पर पिल पड़े हैं, ऐसे में मजदूर हर स्तर पर बिखराव के शिकार होकर सरकार, मालिकान और मैनेज़मेंट के हमलों के आगे लाचार हो गये हैं।

मजदूरों को हर कारखाने में एक यूनियन हो -- इसके लिए कोशिश करनी चाहिए। निश्चित रूप से कई नेता संघर्ष के रास्ते से भटक चुके हैं, बहुत से गलत तत्व भी है, लेकिन अगर सही जनतंत्र के आधार पर यूनियन कायम है तो हर मसले को मजदूरों के बीच ले जाकर निपटारा किया जा सकता है। जिसके साथ ज़्यादा मजदूर होंगे, वह बात लागू होगी। हो सकता है कि कभी सही लोग ही अल्पमत में हो जायें, पर उन्हें लगातार अपनी बातों को दृढ़तापूर्वक कहते हुए मजदूरों को अपने पक्ष में करना होगा। और इस पर भरोसा करना होगा कि अन्ततः जो बात सही होगी, जीत उसी की होगी, बशर्ते हिम्मत न हारी जाये और धीरज के साथ उस पर दृढ़ता से कायम रहा जाये।

इसके साथ ही मजदूरों को सच्चे अन्तरराष्ट्रीयतावादी के रूप में भी सोचना होगा। भूमण्डलीकरण के आज के दौर में जब सारी दुनिया एक-दूसरे से जुड़ती जा रही है, और सारी दुनिया के पूंजीपति मिलकर जनता को लूट रहे हैं, तो अलग-अलग देश के मजदूर अकेले ही मुक्ति नहीं पा सकते। उन्हें सारी दुनिया में फैले अपने भाइयों के जीवन के बारे में जानना चाहिए और एक-दूसरे के संघर्षों से ताकत लेनी चाहिए तथा अनुभवों से सीखना चाहिए।

मजदूरों को अपने रोजमर्रा के संघर्षों के साथ-साथ देश में मजदूर क्रान्ति की राह के बारे में भी सोचना होगा। उन्हें पथभ्रष्ट नेताओं के पीछे-पीछे चलने के बजाय क्रान्ति के अगुआ बनने की तैयारी करनी होगी।

आज पूंजीवादी व्यवस्था का संकट तेजी से बढ़ रहा है। और इसकी गाज सबसे पहले मजदूर पर ही गिरती है। व्यापक मजदूर आबादी आज रोजी-रोटी के लिए मोहताज़ होती जा रही है। जगह-जगह भड़क रही छोटी-मोटी लड़ाइयां मजदूर वर्ग के भीतर भयंकर असंतोष का संकेत दे रही है। इस बात को व्यवस्था भी भांप रही है और मजदूर आंदोलन के दमन के लिए तैयारी में जुट गई है।

लेकिन मजदूर आबादी में फैलते असंतोष को फूट पड़ने से बहुत दिनों तक रोका नहीं जा सकता। लातिनी अमेरिका के देशों के बाद मजदूर आंदोलनों की लहर अब एशिया में भी आ रही है। दक्षिण कोरिया में मजदूर और छात्र-नौजवान मिलकर सत्ता की चूलें हिला रहे हैं; इण्डोनेशिया में मजदूर आंदोलन एक जबर्दस्त ताकत बनकर उभर रहा है जिससे वहां के शासक और साम्राज्यवादी देश भी भयभीत हो रहे हैं। पाकिस्तान और बांगलादेश में आर्थिक संकट के बढ़ने के साथ ही वहां भी मेहनतकश आबादी सड़कों पर उतर रही है।

नई आर्थिक नीतियों के आने के बाद से भारत में जो परिस्थितियां तैयार हुई हैं, उसमें यह लहर भारत में भी आना अटल है। यहां भी आंदोलनों के एक जबर्दस्त विस्फोट का होना अवश्यम्भावी है। भारत जैसे विशालकाय देश में ऐसे विस्फोट का बहुत व्यापक प्रभाव होगा। अगर इसे एक सही दिशा देनी है तो मजदूरों को रोजमर्रा के जीवन के सीमित दायरे से बाहर निकलकर इन बड़े सवालों पर सोचना ही होगा।

● ओ.पी. सिन्हा

इंकलाब के लिए चाहिए एक इंकलाबी पार्टी
एक इंकलाबी पार्टी के लिए चाहिए इंकलाब के विज्ञान की समझदारी

राहुल फाउण्डेशन द्वारा प्रकाशित तीन जरूरी पुस्तिकाएं

- अनश्वर हैं सर्वहारा संघर्षों की अग्निशिखाएं (दूसरा संस्करण शीघ्र प्रकाश्य)
- समाजवाद की समस्याएं, पूंजीवादी पुनर्स्थापना और महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति — बारह रुपए
- क्यों माओवाद? — दस रुपए

प्राप्ति के लिए लिखें या सम्पर्क करें:
● राहुल फाउण्डेशन, 3/274, विश्वासखण्ड, गोमतीनगर, लखनऊ-226010
● जनचेतना, जाफरा बाजार, गोरखपुर -273001

अज्ञान एक राक्षसी शक्ति है और हमें डर है कि यह कई त्रासदियों का कारण बनेगा। महान यूनानी कवियों ने इसे मीकेन तथा थेब्स के शाही घरानों के नाटकों में ठीक ही इसे त्रासदीपूर्ण नियति के रूप में चित्रित किया है। — मार्क्स

मनुष्य को अचिन्तनशील असामाजिक प्राण में तब्दील कर देने वाली घोर प्रतिक्रियावादी संस्कृति के चौतरफा आक्रमण, घटिया साहित्य के घटाटोप और अपसंस्कृति के अंधेरे में जनता की संस्कृति का एक सजग प्रहरी

जनचेतना

प्रगतिशील साहित्य का उत्कृष्ट प्रतिष्ठान

● जाफरा बाजार, गोरखपुर–273 001
● काफी हाउस के निकट, हजरतगंज, लखनऊ (शाम पांच से सात)

स्वत्वाधिकारी डा. दूधनाथ द्वारा 69, बाबा का पुरवा, निशातगंज, लखनऊ से प्रकाशित एवं उन्हीं के द्वारा वानी ग्राफिक्स, अलीगंज, लखनऊ से मुद्रित। कम्पोजिंग : कम्प्यूटर प्रभाग, राहुल फाउण्डेशन, लखनऊ। सम्पादक : डा. दूधनाथ। सम्पादकीय पता : द्वारा, ओ.पी. सिन्हा, 69, बाबा का पुरवा, पेपर मिल रोड, निशातगंज, लखनऊ–226 007 सम्पादकीय उपकार्यालय : जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, मऊ।